RNI क्र. 50309/85 डाक पंजीयन क्र. म. प्र./भोपाल/261/2018-20/पृष्ठ संख्या 44/प्रकाशन तिथि 26 अप्रैल 2020/ पोस्टिंग तिथि 29 अप्रैल

बाल विज्ञान पत्रिका, मई 2020

चकमक

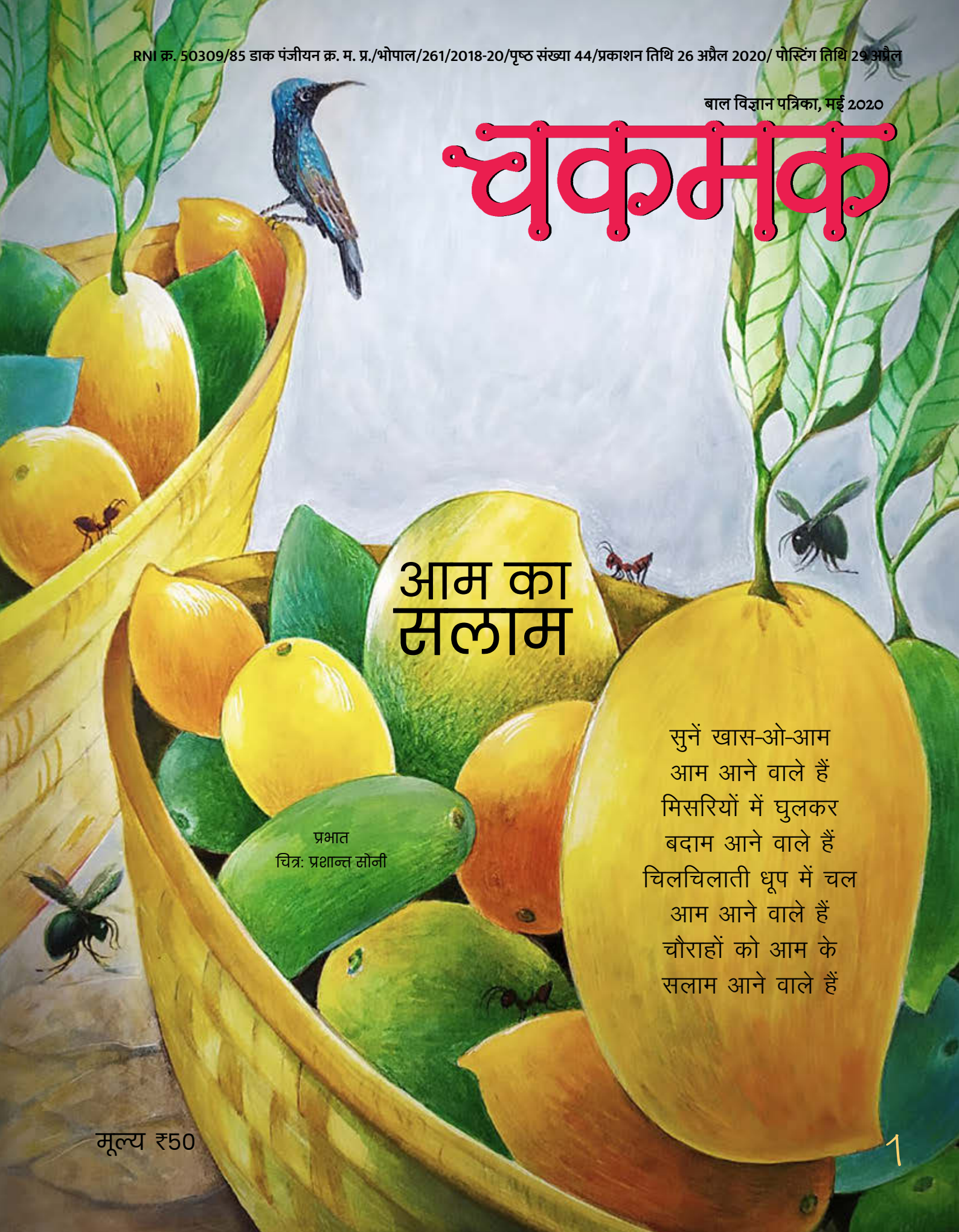

आम का सलाम

प्रभात

चित्र: प्रशान्त सोनी

सुनें खास-ओ-आम
आम आने वाले हैं
मिसरियों में घुलकर
बदाम आने वाले हैं
चिलचिलाती धूप में चल
आम आने वाले हैं
चौराहों को आम के
सलाम आने वाले हैं

मूल्य ₹50

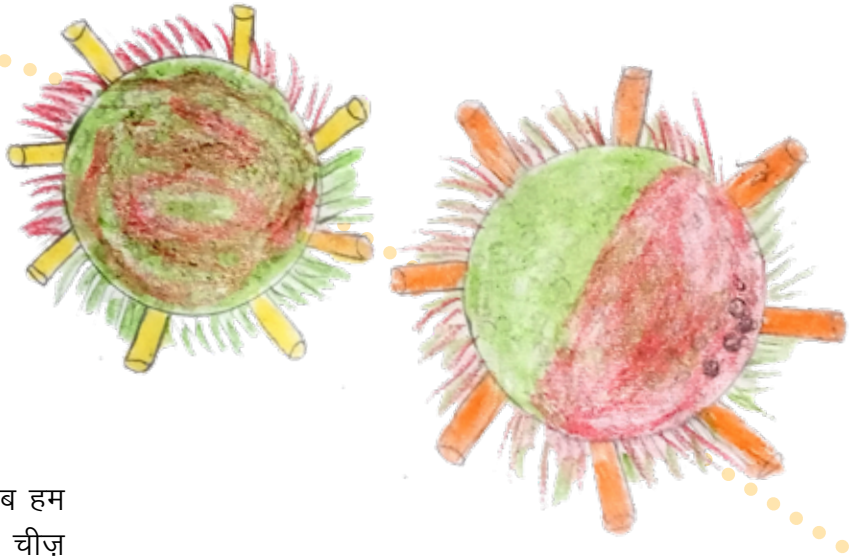

सम्पादकीय

शायद यह पहली बार है जब हम सबकी ज़िन्दगियों पर एक ही चीज़ हावी हो गई है – कोरोना वायरस। इसके बारे में सोच-सुनकर हम थक रहे हैं लेकिन इसके बारे में और जानने की इच्छा भी है। तो इस अंक में कहानियों, कविताओं और पहेलियों के साथ-साथ कोरोना वायरस और लॉकडाउन की भी कुछ बातें हैं।

जब से लॉकडाउन लागू हुआ है हम सब परेशान हैं। कुछ लोग घर बैठे-बैठे बोर हो रहे हैं। वहीं कुछ लोग घर और ऑफिस-स्कूल का काम घर से कर रहे हैं और पहले से कहीं ज़्यादा व्यस्त हैं। कई ऐसे लोग भी हैं जो दिहाड़ी पर काम करते हैं। और इस समय उन्हें व उनके परिवारों को वायरस से ज़्यादा डर भूखे रहने का है। घर का माहौल भी कुछ तनावपूर्ण होता जा रहा है – चिड़चिड़ाहट, गुस्सा, उदासी, मायूसी – शायद तुम भी यह सब देख-महसूस कर रहे होगे। 'तनाव के कारण क्या बाल सफेद हो सकते हैं' इस बारे में एक लेख तुम्हें इस अंक में मिलेगा। 'मेरा पन्ना' में तुम्हें अपने साथी बच्चों के लॉकडाउन के अनुभव पढ़ने को मिलेंगे तो कैद की ज़िन्दगी से निकलने की इच्छा के चलते तुम *चिकन रन* फिल्म के किरदारों से सहानुभूति रख पाओगे।

इस वायरस से बचने के लिए हमारा व्यवहार तो बदल ही रहा है। इसके साथ ही हमारे आसपास के जानवरों का व्यवहार भी बदल रहा है। खाली शहरों-गाँवों में ये बेझिझक आने लगे हैं। ये इन्सानों की भीड़ न होने का फायदा उठा रहे हैं – कुछ खाने की तलाश में आ रहे हैं और ऐसा लगता है कि कुछ तो टूरिस्ट बनकर आ रहे हैं। ऐसे ही कुछ जानवरों के बारे में एक फोटो फीचर व कुछ अन्य बातें भी तुम्हें इस अंक में पढ़ने को मिलेंगी।

हमें लिखना कि यह अंक तुम्हें कैसा लगा और यह भी बताना कि चकमक में तुम क्या देखना-पढ़ना चाहोगे।

चकमक

चित्र: कृष्णा, दूसरी, अपना स्कूल, सम्राट सेंटर, कानपुर, उत्तर प्रदेश

चित्र: संगीता, पहली, अपना स्कूल, सम्राट सेंटर, कानपुर, उत्तर प्रदेश

अंक 404 • मई 2020

चकमक

इस बार

सम्पादकीय 2
चाउमीन - जीतेन्द्र सेन 4
हम - राज कुमारी 4
भूलभुलैया 5
लॉकडाउन में जानवर क्या कर रहे हैं... 6
उसकी मिठास ही कुछ और थी... - यशोदा सिंह 8
स्नो - सेहर सलीम 11
तुम भी जानो 12
चिकन रन - सजिता नायर 14
क्या तनाव से बाल सफेद हो जाते हैं? 17
किताबें कुछ कहती हैं... 18
मेरा पन्ना 20
तुम्हें कुछ... - नेचर कॉन्ज़र्वेशन फाउण्डेशन 22
बोरेवाला - जयश्री कलाथिल 24
तुम भी बनाओ... कबूतर 28
पूँछ टेढ़ी है - राम करन 30
माथापच्ची 38
चित्रपहेली 40
अन्तर ढूँढ़ो 43
कोरोना वायरस और चमगादड़ - रोहन चक्रवर्ती 44

सम्पादन
विनता विश्वनाथन

सह सम्पादक
कविता तिवारी
सजिता नायर

विज्ञान सलाहकार
सुशील जोशी

वितरण
झनक राम साहू

डिज़ाइन
कनक शशि

सलाहकार
सी एन सुब्रह्मण्यम्
शशि सबलोक

सहयोग
अभिषेक दूबे

एक प्रति : ₹ 50
वार्षिक : ₹ 500
तीन साल : ₹ 1350
आजीवन : ₹ 6000
सभी डाक खर्च हम देंगे

चन्दा (एकलव्य के नाम से बने) मनीऑर्डर/चेक से भेज सकते हैं।
एकलव्य भोपाल के खाते में ऑनलाइन जमा करने के लिए विवरण:
बैंक का नाम व पता - स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया, महावीर नगर, भोपाल
खाता नम्बर - 10107770248
IFSC कोड - SBIN0003867
कृपया खाते में राशि डालने के बाद इसकी पूरी जानकारी accounts.pitara@eklavya.in पर ज़रूर दें।

एकलव्य
एकलव्य फाउण्डेशन, जाटखेड़ी, फॉर्च्यून कस्तूरी के पास, भोपाल, मध्य प्रदेश 462 026
फोन: +91 755 2977770 से 3 तक; ईमेल: chakmak@eklavya.in, circulation@eklavya.in
वेबसाइट: https://www.eklavya.in/magazine-activity/chakmak-magazine

चाउमीन

जीतेन्द्र सेन
तेरह वर्ष, भीम नगर पुस्तकालय,
मुस्कान संस्था, भोपाल, मध्य प्रदेश

कितनी लम्बी-लम्बी चाउमीन
बिन्नी बनाती अच्छी चाउमीन
कितनी स्वादिष्ट लगती चाउमीन
कितनी मुझे पसन्द है चाउमीन
रोज़ खाऊँगा मैं तो चाउमीन
चाउमीन चाउमीन चाउमीन
कितनी लम्बी-लम्बी चाउमीन

हम

राजकुमारी
नौ वर्ष, बंजारी पारधी बस्ती,
मुस्कान संस्था, भोपाल, मध्य प्रदेश

सुबह-सुबह मोहल्ले में होता है झगड़ा।
कोई देता है गाली, कोई देता है ताली।
निकलती है जब सूरज की लाली।
पेट और बोरी दोनों होते हैं खाली।
दूर-दूर तक भाग-भागकर जाते हैं।
तभी कुछ पैसे मिल पाते हैं।
कभी-कभी खाली हाथ लौट आते हैं।
कभी भरपेट खाते हैं।
कभी भूखे सो जाते हैं।

क्या तुम पता लगा सकते हो कि
कौन-सा मंचूरियन राजकुमारी
का है और कौन-सा जीतेन्द्र का?

लॉकडाउन में जानवर क्या कर रहे हैं...

नवी मुम्बई में ढेरों गुलाबी फ्लेमिंगो।

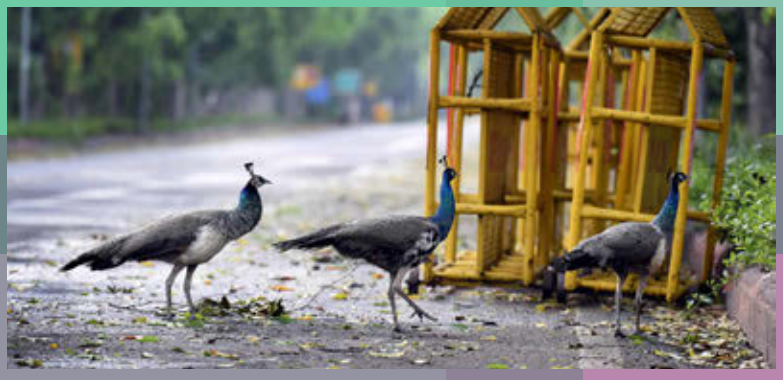

नई दिल्ली के नेहरू मार्ग में टहलतीं मोरनियाँ।

वेल्स के ह्लानडिडनो शहर में चैन से घूमने निकला पहाड़ी बकरों का झुण्ड।

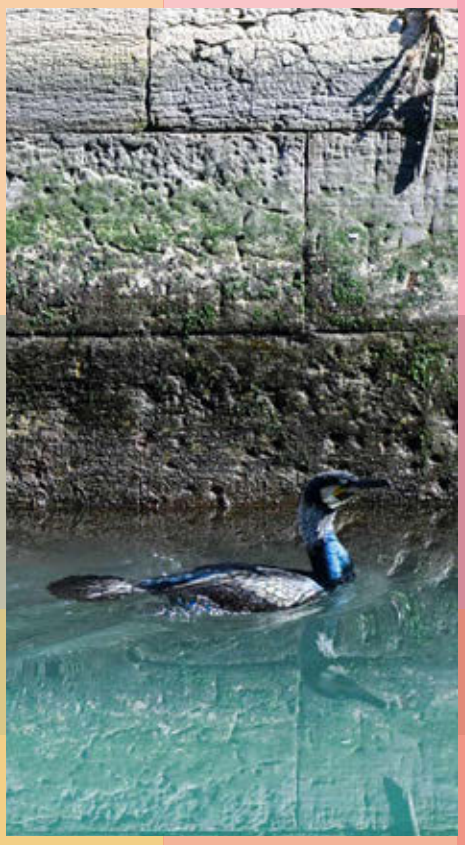

वेनिस कनाल के साफ पानी का मज़ा लेती समुद्री पक्षी।

अर्जेंटिना के बूएनोस आइरेस शहर के दक्षिण में स्थित मर्र देल प्लाता हार्बर में कुछ सी लायन दोस्त धूप का लुत्फ उठाते हुए।

केरल के कोयिकोड़ की सड़कों पर घूमता बिलाव – भारतीय सिवेट।

जापान के बोइंग हिरण नारा अपने पार्क के बाहर क्या है यह जानने की हिम्मत कर रहे हैं।

चिली की राजधानी सैंटिआगो में खाली सड़क का मज़ा लेता एक प्यूमा।

उसकी मिठास ही कुछ और थी...

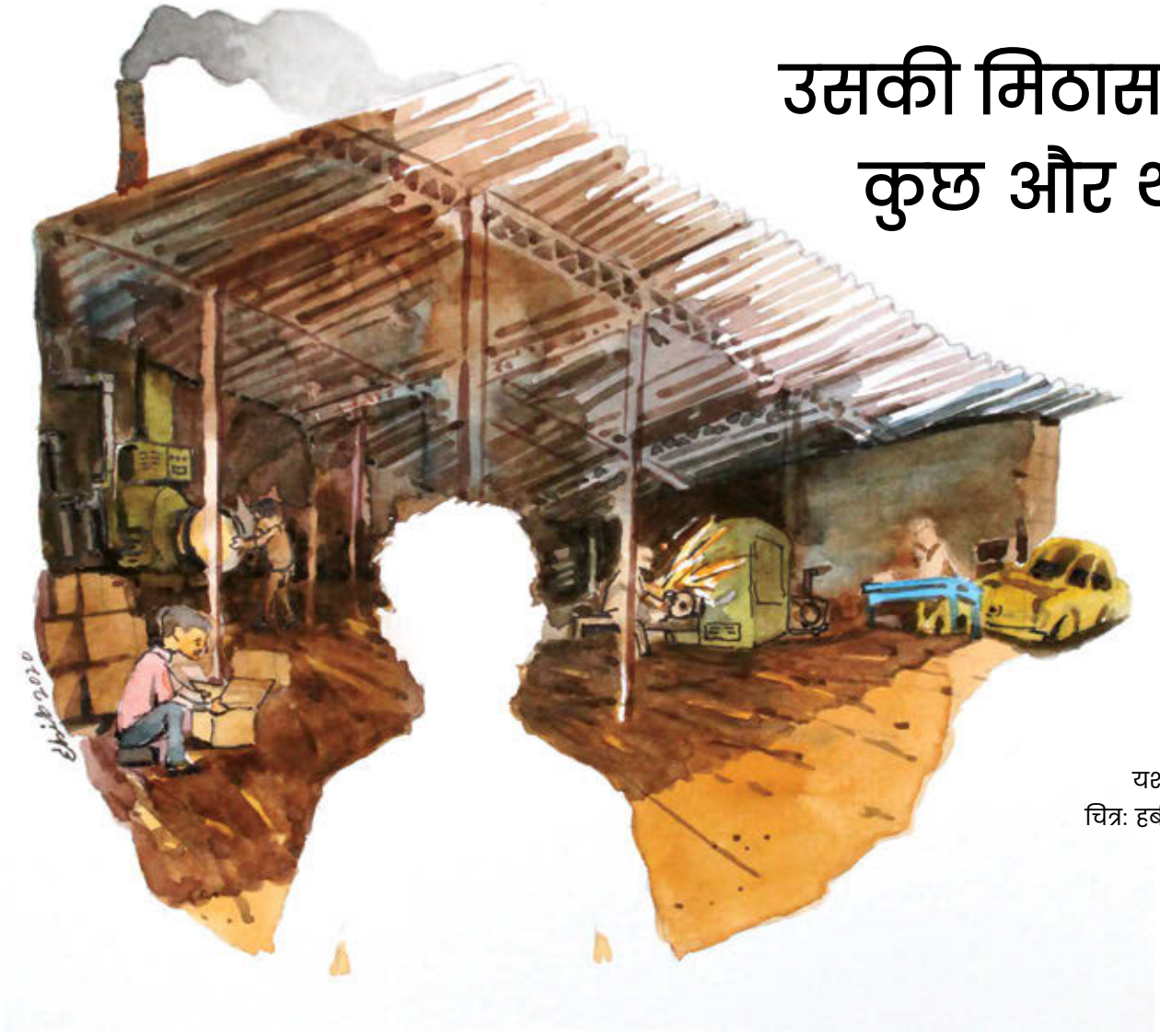

यशोदा सिंह
चित्र: हबीब अली

मुल्लाजी, बैरिंग बनाने की उनकी दो मशीनें और रघुवीरजी ये सभी एक-दूसरे के साथ चालीस साल गुज़ार चुके हैं। पहिए की तरह भागते पैरों और चमकती आँखों में सफेदी छा गई है। फिर भी रघुवीरजी अपने समय के पाबन्द मुल्लाजी के कारखाने में आज भी समय से पहले पहुँचते हैं।

एक समय था जब इस कारखाने में लगभग आठ से दस लोग काम करते थे। धीरे-धीरे सभी छिटकते गए। लेकिन रघुवीरजी ना तो ये कारखाना भूले और ना ही तुर्कमान गेट की टेढ़ी-मेढ़ी गलियाँ। ये गलियाँ अन्दर ही अन्दर हमें कहाँ ले जाएँगी, कोई नहीं जान सकता।

मुझे आज भी याद है जब वो बताते थे कि कैसे उनके पिताजी उनका हाथ पकड़कर इस कारखाने में उन्हें छोड़ गए थे, ये कहकर कि "ये पढ़ने-लिखने का नहीं है, इसे इन्सान बनाओ।" और अपने पिताजी की ज़ुबान के पक्के रघुवीरजी ने भी इस कारखाने की गली ऐसी याद की कि आज भी इसी के फेर में पड़े हुए हैं।

अब कोई ज़ोर-ज़बरदस्ती नहीं है। लेकिन लत लग गई है इस जगह की, मुल्लाजी की और इन चरमराती मशीनों की। उधर मुल्लाजी का भी यही हाल है। जब तक रघुवीरजी के साथ अपने सुख-दुख न बतला लें, उन्हें चैन नहीं मिलता। हाथों में वो कसबल नहीं और मशीनें भी अब कहाँ जवान रह गई हैं!

मुल्लाजी को काम में फायदा हुआ तो उन्होंने खुश होकर रघुवीरजी को दो सौ रुपए नेग के रूप में दे दिए। ये पहला मौका था जब दो सौ रुपए एक साथ रघुवीरजी के हाथ में आए थे। बारह आने में वो इस कारखाने में लगे थे और अब जाकर उनकी गाड़ी साठ रुपए पे आकर रुकी थी।

कपड़े के घिसे हुए जूते और पुराने पड़ते कुर्ते-पजामे में लगे ग्रीस के हाथ भी उनके चेहरे की रौनक छुपा नहीं पा रहे थे। वो एक अदा से घर में दाखिल हुए। हम सबकी नज़रें जैसे उन पर ही ठहर गईं। पर आज हुआ क्या था, समझ नहीं आ रहा था। "क्या खाओगे, बताओ?"

ऐसा पहली बार नहीं हो रहा था। जब भी उन्हें दो-तीन दिन के पैसे इकट्ठे मिलते वो ऐसे ही प्यार से पूछते थे।

सुमनजी ने मुस्कराते हुए छत की ओर देखा और बोलीं, "खिलाओगे तो बाद में, पहले ये सोचो कि इस पर तिरपाल कैसे डलेगी?"

रघुवीरजी जोश में बोले, "अरे छोड़! तिरपाल भी डल जाएगी। सावन पूरा सूखा उतर रहा है। भादुआ लगने में अभी समय है।"

माहौल जोशीला था। सभी अपनी-अपनी पसन्द की चीज़ें बोल रहे थे। किसी को अण्डा खाना था, किसी को मक्खन, किसी को ब्रेड तो किसी को रस। और सबसे छोटी पारो को जलेबी।

रघुवीरजी ने झट-से अपने कुर्ते की जेब से दस-दस के नोट निकाले। उनमें से एक नोट राहुल के हाथ में दिया और बोले, "जा, गरमागरम जलेबी ले आ।" छोटी पारो तो जैसे जलेबी के रस में ही खो गई।

बाकियों से रघुवीरजी बड़े प्यार से बोले, "तुम सबकी चीज़ें सुबह जब डेयरी से दूध लेने जाऊँगा तो लेता आऊँगा।"

रात के खाने के बाद 100 वॉट के बल्ब की चुभती रोशनी में सभी नींद की खुमारी में जाने को तैयार थे। पर सुमनजी और रघुवीरजी की आँखों में नींद नहीं थी। वो चौखट के सिरे पर बैठे धीरे-धीरे कुछ बतिया रहे थे। तभी रघुवीरजी ने सारे पैसे निकालकर सुमनजी की हथेली पर रख दिए।

सुमनजी पैसे गिनते हुए बोलीं, "सुबह में बच्चों को खीर बनाकर बाँटने का मन हो रहा है।"

रघुवीरजी सुमनजी की बात सुनकर खुश होते हुए बोले, "ये तो बड़ा नेक खयाल है। अब मन में आ गया है, तो करना ज़रूर।"

सुबह में सभी की ख्वाहिशों के साथ-साथ शुरू हुई सुमनजी की खीर। सबसे पहले तलाश हुई मोटे और लम्बे चावलों की। सारा कमरा छाना गया। सुमनजी ने वो चावल खास अपनी बेटियों के घर पर आने के लिए बचाकर रखे थे। सोचा था जब वो आएँगी तो वे अपने हाथ से बिरयानी बनाकर उन्हें खिलाएँगी।

'कहाँ रखे हैं' कहते हुए कभी पलंग के नीचे रखे डिब्बों में उन्हें खोजा गया, तो कभी टीवी के पीछे बनी छोटी-सी अलमारी में। मगर उनका मिलना हो नहीं रहा था। रघुवीरजी उन्हें देख रहे थे कि आखिरकार हो क्या रहा है। पर कुछ बोलने की हिमाकत करना उनके लिए ठीक नहीं था। सुबह के 4 बजे थे। बस्ती में सभी सो रहे थे। लेकिन उनके घर में आज सुबह जल्दी हो गई थी। सुमनजी ने सारे बड़े बरतन खोज लिए थे। थोड़ी गुस्सा भी हो रही थीं।

रघुवीरजी ने कहा, "नहीं मिल रहे हैं तो रहने दे। कोई और चावल ले ले।"

सुमनजी, "नहीं, उसी के बनाऊँगी।"

रघुवीरजी, "अरे! तो मैं बाज़ार से ले आता हूँ।"

सुमनजी, "नहीं, वो मोटा चावल है और पुराना भी। जब तक मिलेगा नहीं तुम कहीं मत जाना। अच्छा जाओ, जाकर दूध तो ले ही आओ।"

रघुवीरजी दूध लेने निकल गए। और पूरी गली में बोलते हुए गए कि स्कूल भेजने से पहले बच्चों को घर पर भेज देना।

सुमनजी अभी भी चावलों को ढूँढ़ रही थीं। पलंग के नीचे घुस गईं। फिर याद आया कि वो तो एक पन्नी मे बाँधकर दीवार पर टाँगे हुए हैं। चावलों को उतारा गया। उन्हें साफ करके धोकर रख दिया। फिर उन्हें याद आया कि पिछली बार जब मिठाई का डिब्बा लाए थे तो मिठाई तो बच्चों ने खा ली थी। मगर उनके ऊपर लगे बादाम-काजू किसी को पसन्द नहीं आए थे। उन्हें निकालकर सँभालकर रख दिया था। वो भी निकाले गए। और खीर की ड्रेस पर उन्हें बटन की तरह सजाया गया। फिर तैयार हुई एक ज़बरदस्त खीर।

अब तक तो पूरी बस्ती में खीर की खुशबू और बात दोनों फैल गई थीं। रघुवीरजी ने उसकी पब्लिसिटी जो कर दी थी। प्लास्टिक के चाय वाले कप मँगाए गए और उसमें एक-एक चम्मच खीर डाली गई। एक बड़े-से थाल में उन्हें सजाया गया। रघुवीरजी उस बड़े-से थाल को पकड़कर बस्ती में निकले और गली में जो भी बच्चा उन्हें दिखता, उसके हाथ में एक दोना पकड़ा देते।

खीर की मिठास, रघुवीरजी की मुस्कान और सुमनजी की तसल्ली जैसे आज बस्ती की हर गली में अपनी दस्तक दे रही थी।

यशोदा 2011 से अंकुर संस्था, दिल्ली के साथ जुड़ी हुई हैं। अपने मोहल्ले को नई आँखों से देखना और लिखे हुए को बाँटना उनका नियमित शगल है। वह दस्तक किताब की लेखिका हैं। उनकी लिखी कहानियाँ हिन्दी की कई पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुकी हैं। इन दिनों वह अंकुर के लेखकों के संग एक रिटायर्ड टीचर से संवाद कर 'स्कूल जो मैंने जिया' विषय पर एक लम्बी दास्तान लिख रही हैं।

स्नो

सेहर सलीम

डिज़ाइन: इशिता बिस्वास

कल सुबह मैं खामोशी में उठी। ऐसी खामोशी जो तभी होती है जब धरती पर बर्फ का कम्बल आवाज़ों को दबा देता है। यदि तुम सुबह जागो और कोई आवाज़ न सुनाई दे, तो समझ लो कि बर्फबारी हुई है। पक्षियों की चहचहाहट नहीं, ठण्डी हवा की सरसराहट नहीं। एक सुस्त-सी चुप्पी हर चीज़ को ढँक लेती है। मानो, हर चीज़ बर्फ का कम्बल ओढ़े सो रही हो। यह नीरवता अपने साथ शान्ति लेकर आती है। सौन्दर्य की सफेद, लहराती लड़ियाँ पृथ्वी को आसमान से जोड़ देती हैं...चाहे सिर्फ एक दिन के लिए...या शायद सिर्फ एक पल के लिए।

बर्फ से ढँकी धरती प्रकाश को परावर्तित करती है और इस सुबह को चिल्लई कलाँ[1] की उन मायूस सुबहों से ज़्यादा चमकदार बना देती है जिनसे हमारा सामना काफी दिनों से होता रहा है। खिड़कियों में बर्फ के सफेद प्रकाश की बाढ़ आ जाती है। इन जाड़ों में यहाँ का तापमान लगातार शून्य से नीचे रहा है और लगता है कि यह बर्फ जमी रहेगी और कई दिनों तक बनी रहेगी। ऐसी सुबह अपने सुखद बिस्तर से निकलना मतलब एक ऐसा मिशन जिसके लिए ज़ोरदार इच्छाशक्ति की ज़रूरत होती है। लेकिन जब खयाल आता है कि नीचे नाश्ते में नून चाय (नमक की चाय) और टोस्ट इन्तज़ार कर रहे हैं, तो बिस्तर छोड़ना आसान हो जाता है। और बाहर निकलकर अनछुई बर्फ पर अपने कदमों के निशान बनाना एक अतिरिक्त लाभ होता है। ऐसे दिनों में होने वाली स्नोमैन (हिम-मानव) बनाने की प्रतियोगिताएँ और बर्फ के गोलों की लड़ाइयाँ मेरे चेहरे पर मुस्कान ले आती हैं। यह कश्मीर में जाड़ों का सबसे अच्छा हिस्सा होता है, बर्फबारी का दिन जिसका मतलब होता है – छुट्टी, जब सब लोग घर पर ही रहते हैं।

उठने का समय हो गया है।

1. कश्मीर में 21 दिसम्बर से लेकर 30 जनवरी तक के 40 दिनों की कड़ाके की ठण्ड के समय को चिल्लई कलाँ कहा जाता है।

अनुवाद: सुशील जोशी

सैंड्रा से मिलो

सैंड्रा अमेरिका के फ्लोरिडा प्रदेश के सेंटर फॉर ग्रेट एप्स में रहती है। इसे धोने का बड़ा शौक है – अपने हाथ, खिलौने और अपने आसपास की जगह भी। अपने हाथों को तो यह बढ़िया-से धोती है – आगे-पीछे, दोनों तरफ रगड़कर। मज़े की बात है कि ये इन्सानों से कहीं ज़्यादा बार अपने हाथ धोती है। कोविड-19 के चलते हमें इस ऑरैंगोटैन की नकल करनी चाहिए!

अनोखी पहल

कप्तान टॉम मोर दूसरे विश्व युद्ध का हिस्सा रह चुके हैं और अब इंग्लैंड में रहते हैं। वे 99 साल के हैं और एक यंत्र के सहारे ही चल पाते हैं। जब कोविड-19 फैलने लगा तो उन्होंने तय किया कि वे वहाँ के राष्ट्रीय स्वास्थ्य सर्विस (एनएचएस) के लिए 1000 पाउंड इकट्ठा करेंगे। उन्होंने सोशियल मीडिया पर कहा कि अप्रैल 30 (उनके जन्मदिन) तक वे अपने घर के बागीचे में 25 मीटर लम्बी एक पट्टी पर 100 बार चलेंगे। वे चाहते थे कि उनकी इस मेहनत के लिए लोग एनएचएस के लिए उन्हें पैसे भेजें। कुछ ही दिनों में उनका यह संकल्प वायरल हो गया और लोग उनसे इतना प्रभावित हुए कि दिल खोलकर पैसे भेजने लगे। कप्तान टॉम ने 30 अप्रैल से पहले ही अपना संकल्प पूरा कर लिया। और उन्होंने एनएचएस को 1000 नहीं, बल्कि 2 करोड़ 30 लाख पाउंड दान में दिए।

चमगादड़ खतरे में

पिछले अंक में हमने लिखा था कि ऐसा लगता है कि कोविड-19 चीन की एक चमगादड़ प्रजाति से मनुष्यों में आया है। ये कैसे और कब हुआ इसका हमें पता नहीं। जैसे हमने इसके बारे में लिखा, वैसे ही कई समाचार चैनल व पत्रिकाओं-अखबारों ने भी लिखा है। और इस कारण लोगों के मन में चमगादड़ को लेकर ऐसा डर पैदा हुआ है कि वे अपने इलाके से चमगादड़ को भगाने के चक्कर में उन पेड़ों को काटने लगे हैं जिन पर ये दिन भर सोते हैं। तुम्हें क्या लगता है इससे हम सुरक्षित हो जाएँगे?

असल में दिक्कत चमगादड़ के हमारे आसपास रहने से नहीं है। हाँ, इसका मल न छुओ तो अच्छा होगा। दिक्कत है कि हम इन्हें और इनके सम्पर्क में आने वाले अन्य वन्यजीवों को पकड़कर बेचते-खरीदते हैं। जंगली जीवों के कारोबार की इस माँग को ही हमें खतम करना है। तभी हम जानवरों से मनुष्य में आने वाली बीमारियों से बच सकते हैं। कीटों को खाने वाले और हमारी फसलों का परागण करने वाले चमगादड़ तो हमारे लिए बहुत ही महत्वपूर्ण हैं।

तुम भी जानो

ओडीशा के बीच पर लाखों ऑलिव रिडली टर्टल

हर साल ओडीशा के रुशिकुल्या बीच पर लगभग 15 फरवरी से मार्च के अन्त तक लाखों मादा ऑलिव रिडली टर्टल अण्डे देने आती हैं। लोगों, जहाज़ों और लैम्प की रोशनी से ये परेशान होती हैं। हर मादा टर्टल रेत खोदकर लगभग 100 अण्डे देती है। कुत्तों और जहाज़ों के कारण अकसर इनके अण्डे नष्ट हो जाते हैं। 45 दिनों के बाद रेत से निकलकर छोटे-छोटे टर्टल समुद्र की तरफ दौड़ लगाते हैं। दुनिया भर के 50 प्रतिशत ऑलिव रिडली यहीं आकर अण्डे देती हैं। लॉकडाउन के कारण इस साल ये टर्टल पहले से ज़्यादा तादाद में यहाँ पहुँचे हैं। वन विभाग का कहना है कि जहाँ पिछले साल 3.8 लाख टर्टल यहाँ आए थे, वहीं इस साल 4.5 लाख टर्टल के आने का अनुमान है।

फिल्म समीक्षा

चिकन रन

सजिता नायर

निर्देशक- निक पार्क और पिटर लॉर्ड
निर्माता- निक पार्क, पिटर लॉर्ड और डेविड स्प्रोक्स्टन
कहानी- निक पार्क, पिटर लॉर्ड, कैरी कर्कपेट्रीक, मार्क बर्टोन, जॉन ऑफैरेल

जिंजर फार्महाउस की चारदीवारी में और कैद नहीं रहना चाहती। इसलिए वो बार-बार फार्महाउस से भागने की कोशिश में लगी रहती है। फिल्म के एक दृश्य में, जिंजर आसमान में उड़ रही चिड़ियों की तरफ आँसू भरी निगाहों से देखती है। मानो उम्मीद कर रही हो कि काश मैं भी उड़ पाती तो शायद इस तरह कैद में नहीं रहती। जिंजर को इस बात पर पूरा यकीन है कि फार्महाउस की बेरंग दुनिया के बाहर एक और दुनिया है जो रंगों से भरी है। जहाँ कोई उनके अण्डे हर रोज़ नहीं गिनने वाला, वे जब चाहें अण्डे दें और जब चाहें न दें। उस दुनिया में उन्हें डराने वाला कोई भी नहीं होगा। सबसे बड़ी बात वहाँ कोई दीवारें नहीं होंगी, सिर्फ खुली हरी-भरी ज़मीन होगी।

चिकन रन, क्ले-एनिमेशन फिल्म है। यानी कि इस फिल्म के किरदार क्ले और प्लास्टीसिन से बनाए गए हैं। इस मूवी की कहानी 1950 के इंग्लैंड के समय को ध्यान में रखकर लिखी गई है। *चिकन रन* की कहानी को कहीं न कहीं दूसरे विश्वयुद्ध की जेलों पर बनी फिल्म *द ग्रेट एस्केप* और *स्टेलेग 17* से जोड़कर देखा जाता है। जिस तरह दोनों ही फिल्मों में अमेरिकन और ब्रिटिश जर्मनी के युद्ध कैम्प से निकलने का प्रयास करते हैं, उसी तरह मुर्गियाँ मिसेज़ ट्वीडी के फार्महाउस से बचकर निकलने का प्रयास करती हैं। चाहे वह ज़मीन के अन्दर सुरंग बनाना हो या फिर फार्महाउस से निकलने के लिए सामग्री इकठ्ठा करना हो। अगर तुम इस फार्महाउस की बनावट को देखोगे तो यह भी जर्मनियों द्वारा बनाए गए युद्ध कैम्प की बनावट-सी लगेगी।

फिल्म में यूँ तो सारे ही किरदार खास हैं पर जिंजर और मिसेज़ ट्वीडी का किरदार सबसे अलग है। दोनों ही अपनी मौजूदा ज़िन्दगी को बदलना चाहते हैं। मिसेज़ ट्वीडी अपनी गरीबी से आज़ादी पाना चाहती हैं और जिंजर फार्महाउस की चारदीवारी से। दोनों ही महिला किरदारों का व्यक्तित्व अपने आप में काफी मज़बूत है। जहाँ अमूमन फिल्मों में ज़्यादातर निर्णय पुरुष किरदार लेते हैं वहीं इस फिल्म में सारे निर्णय दोनों महिलाएँ लेती हैं। चाहे वह मिसेज़ ट्वीडी का मुर्गियों की पाय (एक तरह का मीठा पकवान) बनाने वाली मशीन का निर्णय लेना हो या जिंजर का अपनी और अपने साथियों की आज़ादी के लिए प्लेन बनाने का निर्णय।

जिंजर को यह एहसास है कि फार्महाउस में रहना मतलब मौत के करीब रहना। पर यह बात वह अपने दोस्तों को कैसे समझाए?

जिस चीज़ को हमने कभी देखा नहीं होता, जाना नहीं होता उसे अपनाने से हम अकसर डरते हैं। यहाँ जिंजर के दोस्त भी उनकी खुद की आज़ादी और बाहर की दुनिया से डर रहे थे। जहाँ एक तरफ जिंजर को अपनी पूरी ज़िन्दगी फार्महाउस में ही गुज़ार देना मंज़ूर नहीं था, वहीं दूसरी तरफ उसके दोस्तों को बाहर की दुनिया में बिना फार्महाउस की दीवारों के रहना मंज़ूर नहीं था।

फिल्म का एक और किरदार जो अपनी आज़ादी के लिए लड़ता है, वह है रॉकी। जब जिंजर के सामने एक मुर्गा आसमान से फार्महाउस में आकर गिरता है तो उसे कुछ समझ नहीं आता, पर जब उसके हाथ वो पोस्टर लगता है जिसमें लिखा था 'रॉकी: उड़ने वाला मुर्गा' तो उसके अन्दर एक उम्मीद-सी जागती है। रॉकी न चाहते हुए भी जिंजर की मदद करने के लिए मान जाता है ताकि उसे सरकस में वापिस न जाना पड़े। रॉकी मुर्गियों को उड़ने की तैयारी कराने के लिए तरह-तरह के ऊटपटाँग व्यायाम कराता है। साथ ही मुर्गियों की तनाव से भरी ज़िन्दगी में कुछ हँसी के पल लाता है। पर सवाल यह है कि क्या रॉकी सचमुच मुर्गियों को उड़ना सिखा पाएगा?

यह फिल्म कॉमेडी और ड्रामा का बहुत सही मिश्रण है। मिस्टर ट्वीडी का किरदार कॉमेडी न होते हुए भी कॉमेडी बन जाता है, जब वे इस उलझन में पड़ जाते हैं कि क्या सच में ये मुर्गियाँ कोई योजना बना रही हैं या ये सब सिर्फ उनके दिमाग में है। यह उन फिल्मों में से एक है जिन्हें एक बार नहीं कई बार देखा जा सकता है। इस लेख का अन्त मैं फिल्म के अन्त की कुछ लाइनों के साथ करना चाहूँगी। यह उन दो चूहों की बातचीत का हिस्सा है जो शुरू से अन्त तक फार्महाउस से बाहर निकलने के लिए एक तरह से मुर्गियों की मदद कर रहे थे।

क्या तनाव से बाल सफेद हो जाते हैं?

कहते हैं कि तनाव के कारण लोगों के बालों का रंग उड़ जाता है, बाल सफेद हो जाते हैं। कहा तो यह भी जाता है कि मुमताज़ महल की मृत्यु के बाद शाहजहाँ के बाल एकाध हफ्ते में ही सफेद हो गए थे। इसी तरह फ्रांस की रानी मैरी एंटुआनैट के बाल उस रात सफेद हो गए थे जिसके अगले दिन उनका सिर कलम किया जाना था। तो क्या ऐसा हो सकता है?

कुछ शोधकर्ताओं ने मामले की तह तक पहुँचने के लिए चूहों पर अपने कई सारे प्रयोग किए हैं। लेकिन उन्हें लगता है कि इसके परिणाम मनुष्यों पर लागू होंगे।

सबसे पहले उन्होंने उन स्टेम कोशिकाओं (शुरुआती कोशिकाएँ जिनसे अलग-अलग ऊतकों की कोशिकाएँ बन सकती हैं) पर ध्यान केन्द्रित किया जो मेलेनोसाइट बनाती हैं। मेलेनोसाइट मेलेनीन रंजक युक्त कोशिकाएँ हैं। ये मेलेनोसाइट प्रत्येक बाल में मेलेनीन पहुँचाती हैं जिसका रंग काला होता है। मेलेनोसाइट बनानी वाली स्टेम कोशिकाओं पर ध्यान जाना स्वाभाविक था क्योंकि मेलेनोसाइट स्टेम कोशिकाओं की तादाद में फर्क पड़ने से बालों के रंग पर असर पड़ता है।

पहले तो शोधकर्ताओं ने इन चूहों को उनके डील-डौल के हिसाब से तनाव दिया। जैसे उनके पिंजड़ों को झुकाकर रखा गया या उनके सोने की जगह को गीला रखा गया या रात भर लाइटें चालू रखी गईं। शोधकर्ताओं ने देखा कि तनाव के कारण वास्तव में चूहों के बाल सफेद हो जाते हैं।

विचार बना कि शायद तनाव बढ़ने पर इन चूहों के प्रतिरक्षा तंत्र (इम्यून सिस्टम) की कोशिकाएँ मेलेनोसाइट स्टेम कोशिकाओं पर आक्रमण कर रही हैं। और इस वजह से इन स्टेम कोशिकाओं की संख्या कम होने लगी है। लेकिन जिन चूहों में प्रतिरक्षा कोशिकाएँ नहीं थीं, उनके भी बाल सफेद हुए। तो नतीजा यह निकाला गया कि तनाव के कारण बाल सफेद होने में प्रतिरक्षी कोशिकाओं का हाथ नहीं है।

अगला विचार आया कि शायद इसमें कॉर्टिसोल की भूमिका होगी। कॉर्टिसोल वह प्रमुख हारमोन है जो तनाव के समय बनता है। यह बालों पर भी असर डालता है। लेकिन प्रयोगों में देखा गया कि उन चूहों में भी बाल सफेद हुए जिनकी कॉर्टिसोल बनाने वाली ग्रन्थि निकाल दी गई थी। तो अब क्या?

इसके बाद उनका ध्यान अनुकम्पी तंत्रिका तंत्र पर गया। यही तंत्रिका तंत्र हारमोन के प्रभाव से तनाव जनित व्यवहारों और 'लड़ो या भागो' प्रतिक्रिया को अंजाम देता है। इन अनुकम्पी तंत्रिकाओं के सिरे हर रोम के आसपास लिपटे होते हैं। जब टीम ने चूहों में इन कनेक्शन को काट दिया तो जल्दी ही चूहों के बाल सफेद हो गए।

अभी यह स्पष्ट नहीं है कि क्या उम्र के साथ बाल सफेद होने की प्रक्रिया में भी अनुकम्पी तंत्रिकाओं की भूमिका है। लेकिन शोधकर्ताओं का खयाल है कि सफेद बालों की समस्या के सन्दर्भ में कुछ तो आशा जगी है।

स्रोत फीचर्स से साभार

किताबें कुछ कहती हैं...

किताबों की दुनिया में जाने का एक रास्ता है किताबों की समीक्षाएँ। कुछ बच्चों ने अपनी पसन्द की किताबों की समीक्षाएँ हमें भेजीं। इनमें से कुछ समीक्षाएँ हम यहाँ दे रहे हैं।

तुमने भी, अगर कोई किताब या कोई कहानी-कविता वगैरह पढ़ी हो और उसके बारे में तुम कुछ कहना चाहो तो, हमें लिख भेजना। क्या अच्छा लगा और क्या अच्छा नहीं लगा... हम तुमसे सुनना चाहेंगे।

गोनू का कुआँ

कहानी - रणीराम गढ़वाली
चित्र - शैबाल
प्रकाशक - नेशनल बुक ट्रस्ट
मूल्य - रु 50

इसके चित्र बहुत ही अच्छे लग रहे हैं। जो जानवर जैसा दिखता है, वैसे ही चित्र बनाए गए हैं। शेर थोड़ा डार्क कलर का है। लेकिन शेर का रंग तो थोड़ा ऑरेंज, थोड़ा पीला-सा होता है। इसमें तो कत्थई बनाया है।

कुछ शब्द समझ में नहीं आ रहे हैं, जैसे कि एकमात्र, सदुपयोग, व्यर्थ। बाकी भाषा तो समझ में आ रही है। शब्द सरल और पढ़े हुए हैं। भाषा सरल है। समझ भी आ रही है कि कोई कुआँ है। उसमें पानी सूखने पर जंगल के जानवर दूसरी जगह पानी ढूँढ़ रहे हैं। जब मैं ये कहानी पढ़ रही थी तो मुझे याद आ रहा था कि मेरी नानी के घर के पास एक सूखा कुआँ है। उसमें बहुत सारे कबूतर रहते हैं। तो मैं सोच रही थी कि कहीं यहाँ मेरी नानी के घर वाले कुएँ की बात तो नहीं चल रही। जब मैं ये कहानी सुन रही थी तो मेरी आँखों के सामने बस उसी कुएँ की पिक्चर बन रही थी।

समीक्षा:

अर्शिया, बारह वर्ष, क्राइस्ट मेमोरियल स्कूल, भोपाल, मध्य प्रदेश
सायरा, तेरह वर्ष, मुस्कान पुस्तकालय, भोपाल, मध्य प्रदेश

ये कहानी हमें अच्छी लगी। इसमें सुसेअम्मा अन्बु को डाँटती हैं और कुछ खाने के लिए भी नहीं देतीं। हमारे घर पर भी एक कुतिया आती है, जिम्मी। हम लोग भी उसे खाना नहीं डालते और भगा देते हैं। लेकिन वो हमारे बकरी के बच्चे को बचाती है। उसकी वजह से कोई भी इन्सान हमारी बकरी के बच्चे को हाथ लगाने से डरता है। जब मैं यह कहानी पढ़ रही थी तो सोच रही थी कि अन्बु भी जिम्मी की तरह ही करता है।

हमें अँग्रेज़ी में सुसेअम्मा नाम पढ़ना नहीं आ रहा था। बाकी तो सब समझ आ रहा था। चित्र भी अच्छे लग रहे थे। हाथी के चित्र ज़्यादा हैं। सुसेअम्मा के भी हैं और अन्बु के भी। चित्र में दिख रहे लोग केरल के लोगों जैसे लग रहे थे। काले और घुंघराले बाल वाले चित्र से मुझे समझ आया कि कहानी केरल की है। एक चित्र में सुसेअम्मा को बहुत ज़्यादा ही मोटा बना दिया है। क्या वो कोई मोटी औरत हैं?

सुसेअम्मा रोज़ अपने ठेले पर अच्छी चीज़ बेचने निकलती हैं और छोटा अन्बु उनके खाने के डिब्बे से आने वाली लज़ीज़ खुशबू का पीछा करता है। क्या अन्बु को खाना मिल पाएगा? इसका जवाब तो किताब पढ़कर ही मिलेगा।

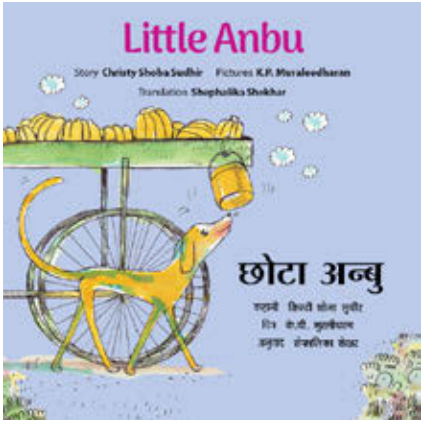

छोटा अन्बु

कहानी – क्रिस्टी शोभा सुधीर
चित्र – के पी मुरलीधरन
अनुवाद – परीक्षित सूर्यवंशी
प्रकाशक – तूलिका
मूल्य – रु 165

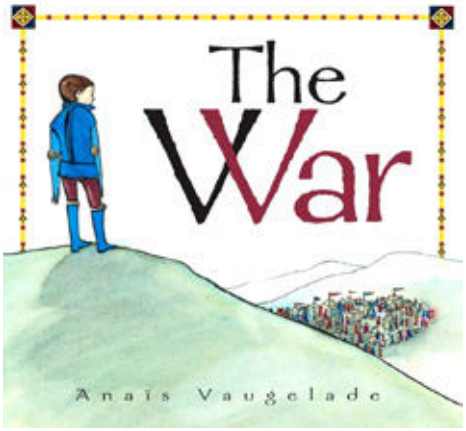

द वॉर
लेखक व चित्रकार - आने वॉगलेड
प्रकाशक - कैरलरोडा पिचर बुक्स
मूल्य - ऊ 450

समीक्षा : कविता तिवारी

द वॉर जैसा कि नाम से ही पता चलता है यह कहानी है युद्ध के बारे में। लाल और नीली सेनाओं के बीच लम्बे समय से चले आ रहे एक युद्ध के बारे में। साथ ही साथ युद्ध के मैदान को एक हँसते-खेलते गाँव में तब्दील कर देने के बारे में भी। जब युद्ध में नीली व लाल दोनों ही सेनाओं के अधिकांश सिपाही मारे जाते हैं, तब लाल सेना का राजकुमार जूलियस नीली सेना के राजकुमार फैबियन को युद्ध के लिए ललकारता है।

पर फैबियन को युद्ध में कोई दिलचस्पी नहीं होती। संयोग से युद्ध के दौरान कुछ ऐसी घटना घट जाती है कि जूलियस मर जाता है और फैबियन को वहाँ से भागना पड़ता है। फैबियन के पिता उसे बुज़दिल समझकर अपने राज्य से निकाल देते हैं। और तब फैबियन कुछ ऐसी तरकीब निकालता है कि लाल व नीली सेना को युद्ध के मैदान में साथ-साथ रहना पड़ता है।

धीरे-धीरे उनके पीछे-पीछे उनकी पत्नियाँ, बच्चे व जानवर भी वहीं आकर बस जाते हैं। इस तरह निराशा, भय व आतंक से भरा युद्ध का मैदान एक गाँव में तब्दील हो जाता है। यह कितनी सुखद कल्पना है। मुझे लगता है यह 'साथ में रहना' बड़े कमाल की चीज़ है। साथ में रहकर दोनों सेनाओं के लोगों ने एक-दूसरे को जाना होगा। उन्होंने शायद यह भी जाना होगा कि वे कितने कुछ एक-से हैं, और किन मामलों में अलग-से हैं।

यह किताब हमारे सामने कई खास बातें रखती है। जैसे कि एक जगह यह ज़िक्र है कि यह युद्ध इतने लम्बे समय से चल रहा था कि किसी को यह याद नहीं रहा कि युद्ध आखिर शुरू क्यों हुआ। दुनिया में चल रहे कुछ युद्ध शायद ऐसे ही हैं।

इस कहानी को पढ़ते हुए यह भी एहसास हुआ कि हमारे समाज में कुछ लोगों से कुछ खास तरह के व्यवहार की अपेक्षा होती है। मसलन अगर कोई राजकुमार है तो उसे युद्ध में माहिर होना ही चाहिए। यह कैसे हो सकता है कि कोई राजकुमार हो और उसे युद्ध ना पसन्द हो। तभी तो फैबियन को बुज़दिल समझकर राज्य से बाहर निकाल दिया गया।

कहानी में दो जगहों पर दो अलग-अलग राजाओं के रोने का ज़िक्र भी है। एक राजा तो युद्ध में मारे गए उन सैनिकों के लिए रोता है जिन्हें वह जानता भी नहीं। आमतौर पर कहानियों में राजा के इस तरह के किरदार कम ही देखने को मिलते हैं।

कहानी के चित्र अच्छे हैं। परन्तु वे कहानी को समृद्ध नहीं करते। यानी वो कहानी में कुछ भी नया नहीं जोड़ते है। बस कहानी को जस का तस दर्शाते हैं।

मैंने अपने अभी तक के जीवन में कोई युद्ध का समय नहीं देखा। शायद तुमने भी नहीं देखा हो। पर हम सबने युद्ध के बारे में पढ़ा ज़रूर है और हम सब अपने परिवार, मोहल्ले या समुदाय में होने वाले लड़ाई-झगड़ों, फसादों से अच्छी तरह वाकिफ हैं। इस कहानी ने मुझे इन लड़ाइयों के बारे में सोचने पर मजबूर किया। काश ये लड़ाइयाँ नहीं होतीं।

चित्र: अकुल भण्डारी, सातवीं, दिल्ली पब्लिक स्कूल, वज़ीराबाद, दिल्ली

लॉकडाउन में दिक्कत

गोविन्द धायगुडे
छठवीं, प्रगत शिक्षण संस्थान, फलटण, सतारा, महाराष्ट्र

शुरू में जब हमारे स्कूल में छुट्टी दी गई तो मुझे बहुत खुशी हुई। मैं हर रोज़ खेलने जाता था। बड़ा मज़ा आता था।

फिर कुछ दिनों बाद धारा 144 लागू हुई यानी संचारबन्दी हुई। हमको तो बाहर जाने की आदत रहती थी। पर फिर 14 अप्रैल तक लॉकडाउन पुकारा गया। अब तो मुझे इतना बकवास लग रहा है कि इससे अच्छा तो स्कूल था। अब तो बाहर भी नहीं निकलना है। 25 मार्च को मैं अपना जन्मदिन भी नहीं मना पाया। अगर दुकान जाओ तो वहाँ भी मास्क लगाना पड़ता है। ऐसा लगता है कि पूरा विश्व कोरोना के पिंजरे में कैद हो गया है। पर इसमें कुछ अच्छाई भी है। कार्बन डाइ ऑक्साइड का उत्सर्जन कम हो गया है और हवा कुछ शुद्ध हो गई है। घर में जब मैं मोबाइल, टीवी देखकर बोर हो जाता हूँ तो मम्मी के साथ कैरम खेल लेता हूँ। मुझे लगता है कि कोरोना के खिलाफ यह लड़ाई हम ज़रूर जीतेंगे।

दिक्कतों का घर

जीनत खातून
स्वतंत्र तालीम, लखनऊ, उत्तर प्रदेश

हमें और हमारे पूरे परिवार को हर एक चीज़ की दिक्कत है जैसे सब्ज़ी, दाल, निरमा, साबुन, तेल। हम सब बहुत मुश्किलों से जी रहे हैं। हमारे घर में एक भी रुपया नहीं है। इसके कारण हम नल नहीं बनवा पा रहे हैं। जिससे पानी पीने और नहाने की दिक्कत है। कोरोना तो दिक्कतों का घर है।

मास्क कैसे खरीदें

रेखा
स्वतंत्र तालीम, लखनऊ, उत्तर प्रदेश

कोरोना में दिक्कत है कि पैसों की कमी है। कहीं सब्ज़ी नहीं लाने देते। अगर कोई बीमार है तो उसे देखने नहीं जाने देते क्योंकि सब जगह पुलिस लगी है। अगर आटा पिसाना है तो सेमरी पर पिसवाना होता है पर वहाँ तो पुलिस खड़ी है तो आटा कैसे पिसवाएँ। सारी दुकानें बन्द हैं। ट्रेन, बस, टैम्पो सब बन्द हैं। जो मज़दूर हैं वो तो मज़दूरी के सहारे हैं। वह इतने लोगों का खर्चा कैसे चलाए। एक जगह से दूसरी जगह जाना भी मना है। बिना मास्क लगाए लोग कहीं जा नहीं सकते। अगर कोई के पास मास्क नहीं है तो वह कैसे मास्क खरीदेगा।

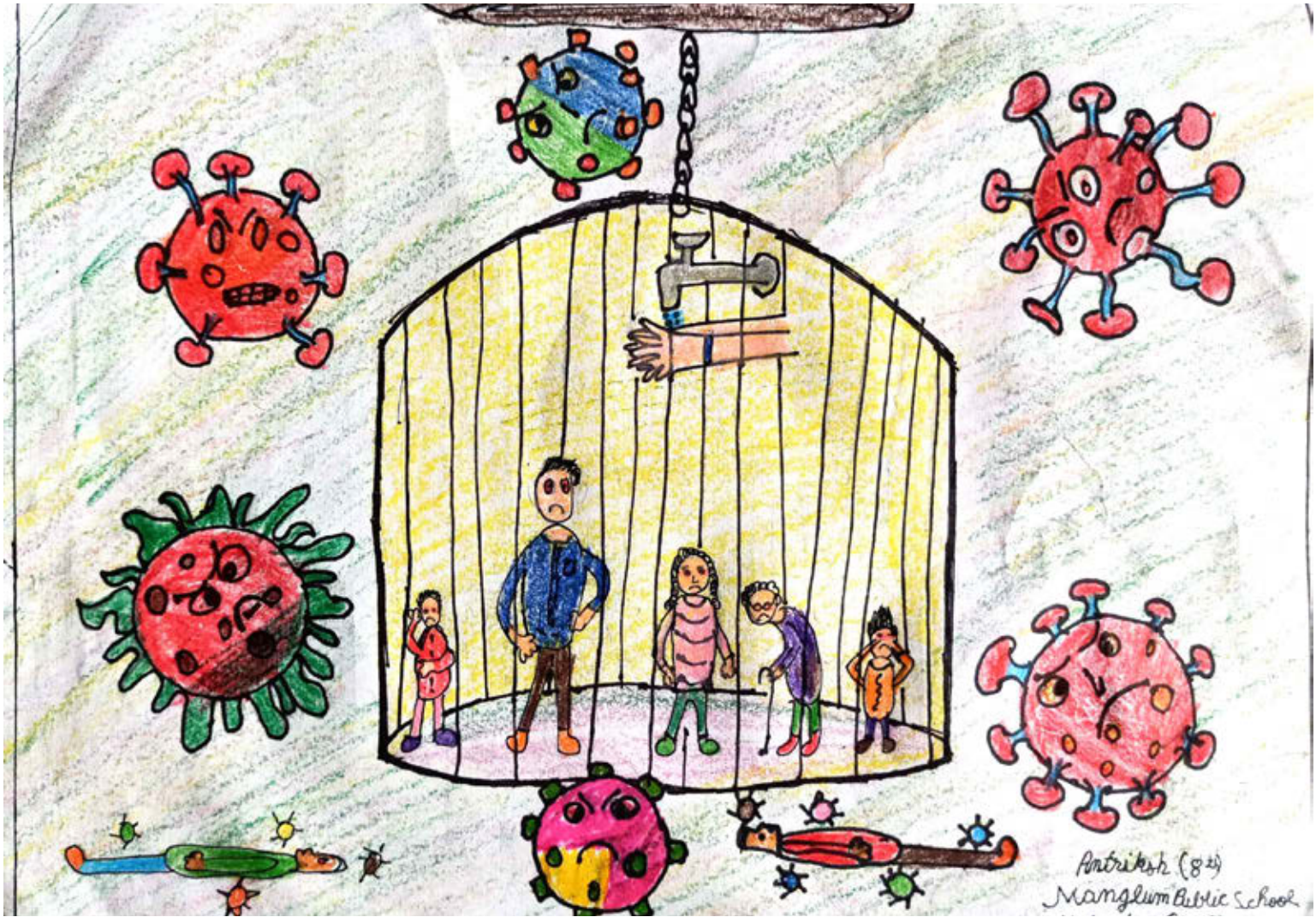

चित्र: अन्तरिक्ष, आठवीं, मंगलम पब्लिक स्कूल, महादेव, मण्डी, हिमाचल प्रदेश

पेज 32 पर जारी

क्या तुमने कभी चुप्पी को सुना है?

क्या कभी तुमने अपने आप को एकदम सन्नाटे में पाया है? जहाँ कोई बात न कर रहा हो, जहाँ ना तो किसी चिड़िया की चहचहाहट हो, ना किसी पत्ते की सरसराहट। ना किसी गाड़ी की आवाज़ और ना ही फ्रिज की भिनभिनाहट? किसी ऐसी जगह के बारे में सोचने की कोशिश करो जहाँ एकदम चुप्पी हो।

पता है, किसी जगह के बारे में बताना हो तो ज़रूरी नहीं है कि यह सिर्फ शब्दों और चित्रों के माध्यम से ही हो। अकसर किसी जगह की कुछ खास आवाज़ें होती हैं जो उस जगह की पहचान होती हैं।

तुम्हें कुछ सुनाई दिया?

फील्ड डायरी के लिए

चलो अपने आसपास की कुछ जगहों की आवाज़ों को दर्ज करने की कोशिश करते हैं। हो सकता है इन जगहों की कुछ खास आवाज़ें हों। अपने घर के किसी व्यक्ति के साथ यह करना – किचन, बालकनी/खिड़की या छत और बगीचे ऐसी किन्हीं तीन जगहों में दिन के अलग-अलग समयों पर जाना। हर जगह पर –

- अपनी आँखें बन्द करना और ध्यान से सुनना।
- दो-तीन मिनट बाद आवाज़ों को अपनी डायरी में दर्ज करना शुरू करना और ऐसा 5 मिनट तक करना। आवाज़ किसी की भी हो सकती है – बातचीत की आवाज़, अलग-अलग गाड़ियों की आवाज़ें, लाउडस्पीकर पर चिल्लाने की आवाज़, मशीन के चलने की आवाज़, झाड़ू की कर्र-कर्र, हवा की फर्र-फर्र, पक्षियों, कीड़ों और अन्य जानवरों की आवाज़ें आदि।
- ये भी लिखना कि ये आवाज़ें धीमी थीं या ज़ोर की। इन आवाज़ों को 1 से 5 कै पैमाने पर आँकने की कोशिश करना जहाँ 1 बहुत ही धीमी आवाज़ है और 5 एकदम ज़ोरदार।

अगर तुम किसी आवाज़ को पहचान नहीं पाओ तो जितना हो सके उसका वर्णन अपनी डायरी में लिखो। क्या वो आवाज़ तुम्हें किसी अन्य आवाज़ की याद दिलाती है? अपने साथी या परिवार-दोस्तों से उसके बारे में पूछो या फिर आवाज़ का पीछा करते उसके स्रोत तक पहुँचने की कोशिश करो।

किस जगह पर तुम्हें सबसे ज़्यादा अलग-अलग आवाज़ें सुनाई दीं? किस जगह पर सबसे कम? सबसे ज़्यादा चहल-पहल कहाँ थी?

हर जगह की आवाज़ों को तीन समूहों में बाँट दो – (1) भौतिक पर्यावरण की आवाज़ें जैसे हवा का चलना, पानी का बहना इत्यादि (2) जीव-जन्तुओं की आवाज़ें* – फूलों के टपकने की आवाज़ें, जानवरों की आवाज़ें और (3) मनुष्यों से जुड़ी आवाज़ें जैसे बातचीत, मशीन, गाड़ियों की आवाज़ें। क्या जीव-जन्तु समूह की आवाज़ें बाकी दोनों समूहों की आवाज़ों से ज़्यादा निकलीं?

*वैसे तो हम जीव-जन्तुओं में ही आते हैं लेकिन इस गतिविधि के लिए हम खुद को इस समूह में शामिल नहीं करेंगे।

बदलती आवाज़ें

मोहल्ले में बदलाव हो तो उसकी आवाज़ें भी बदलती हैं। मसलन ट्रैफिक का शोर जब बढ़ता है तो पक्षियों, चूहों, मेंढकों और टिड्डों की आवाज़ें दब जाती हैं।

वैसे वैज्ञानिकों ने एक रोचक बात पाई है – जहाँ गाड़ियों की आवाज़ें ज़्यादा होती हैं वहाँ कुछ पक्षी और ज़ोर-से गाने लगते हैं ताकि उनके साथी उन्हें सुन सकें। इसी उद्देश्य से कभी-कभी ये पक्षी अपनी आवाज़ को इतना बदल डालते हैं कि वे जंगलों में रहने वाले अपनी ही प्रजाति के सदस्यों से काफी अलग सुनाई देते हैं!

प्रतियोगिता

फील्ड डायरी के अपने नोट्स हमें chakmak@eklavya.in पर भेजो या 9753011077 पर व्हॉट्सऐप करो और एक किताब जीतने का मौका पाओ। हमें ज़रूर बताना कि तुम्हें किस जगह की आवाज़ें सबसे ज़्यादा पसन्द आईं, और क्यों? क्या तुम्हें याद है कि लॉकडाउन से पहले क्या हालात थे? तुम्हें क्या लगता है – लॉकडाउन के बाद हमारी दुनिया की आवाज़ें कैसे बदलेंगी? तुम क्या चाहोगे कि ये कैसे बदलें?

nature conservation foundation
science for conservation

अनुवाद: विनता विश्वनाथन

बोरेवाला

मूल तेलुगू कहानी: जयश्री कलाथिल
चित्रांकन: राखी पेशवानी
अँग्रेज़ी से अनुवाद: शशि सबलोक

यह कहानी अन्वेषी द्वारा विकसित की गई डिफरेंट टेल्स का हिस्सा है।

डिफरेंट टेल्स क्षेत्रीय भाषा की कहानियाँ ढूँढ़-ढूँढ़कर निकालता है, ऐसी कहानियाँ जो ज़िन्दगी की बातें करती हैं – ऐसे समुदायों के बच्चों की कहानियाँ जिनके बारे में बच्चों की किताबों में बहुत कम पढ़ने को मिलता है। कई सारी कहानियाँ लेखकों के अपने बचपन का बयान करते हुए बड़े होने के अलग-अलग ढंगों को प्रस्तुत करती हैं, प्राय: एक प्रतिकूल दुनिया में जहाँ वे हमजोलियों, पालकों और अन्य वयस्कों से नए सम्बन्ध बनाते हैं। ज़ायकेदार व्यंजनों, छोटे-छोटे जुगाड़ू खेलों, स्कूल के अनापेक्षित सबकों और दिलदार दोस्तियों के माध्यम से ये कहानियाँ हमें एक दिलकश सफर पर ले जाती हैं।

फातिमा टीचर की सीट के पीछे वाली दीवार घड़ी में चार बजने में अभी तीन मिनट बाकी थे। आयाम्मा घण्टी बजाने के लिए बरामदे की ओर चल दी थीं। यह इस साल की आखिरी घण्टी थी। कल से गर्मियों की छुट्टियाँ शुरू हो जाएँगी।

पर मुझे इन छुट्टियों का बिलकुल इन्तज़ार नहीं था। बस इतनी तसल्ली ज़रूर थी कि फातिमा टीचर से कुछ दिनों के लिए पिण्ड छूटेगा। जब देखो मेरी हैंडराइटिंग के पीछे पड़ी रहती हैं। अगले साल बस इतना भर हो जाए कि मुझे उस सोने की बालियों और गुलाबी रिबनों वाली मालती के बगल में न बैठना पड़े। तो अच्छा ही हुआ कि स्कूल बन्द हो गए। यह पहली छुट्टी होगी जब सजीचेची मेरे साथ नहीं होगी। पूरे दो महीने कैसे कटेंगे? क्या करूँगी मैं!

घण्टी बज गई। फातिमा टीचर को अपनी ओर आते देख मैं तेज़ी से कॉपी-किताबें बैग में ठूँसने लगी।

“तो छुट्टियों का इन्तज़ार था तुम्हें, अनु?” टीचर ने पूछा।

“हाँ।” उन्हें सच्ची बात बताने का फायदा भी क्या था।

“कोई प्लान-व्लान है?”

“अभी तो नहीं,” मैं बोली। “मुझे जाना होगा। अम्मा इन्तज़ार कर रही होंगी।”

मैं जल्दी-जल्दी बाहर आ गई। वो भी क्लास से निकलीं और आयाम्मा से बातें करने लगीं। मैं जानती थी वो क्या बातें कर रही

होंगी। "बेचारी," फुसफुसाते हुए वो कह रही होंगी, "कितनी अकेली हो गई न। बहन मर गई। माँ की हालत ऐसी हो गई। और निकम्मा बाप..."

मुझे इस सब से नफरत है। पर इन दिनों मेरे आसपास सभी फुसफुसाते रहते हैं। सजीचेची को इन फुसफुसाहटों से निपटना ज़रूर आता होगा। उसे पता होता था कि इन परेशान करने वालों को कैसे चुप कराना है। पर अभी तो वह खुद इन फुसफुसाहटों की वजह बनी हुई है। चार महीने तेईस दिन पहले सजीचेची की मौत हो गई। कोई नहीं जानता कि हलका-सा बुखार इतना कैसे बढ़ गया कि उसकी जान ही चली गई। डॉक्टर प्रभाकरन ने उसे मेडिकल कॉलेज भी भेजा था पर कोई फायदा नहीं हुआ।

मैं अब इस सब के बारे में बिलकुल सोचना नहीं चाहती थी। सोचती तो रो देती। और रोती ही रहती। मुझे उसकी बहुत याद आती थी – हमेशा आती थी। मैं उसके बिना कुछ नहीं कर सकती। काश, वो वापस आ जाती और मुझ पर हुक्म जमाती... मुझे बताती कि मैं क्या तिकड़म भिड़ाऊँ कि अम्मा बिस्तर से उठ जाएँ और कुछ खा-पी लें। क्योंकि उन दिनों अम्मा सारा-सारा दिन बस बिस्तर पर लेटी रहती थीं।

मैं चाहती थी कि वो वापस आ जाए और बताए कि मैं क्या करूँ कि अच्चन काम से सीधे घर आ जाएँ। बीच में पड़ने वाले राधाकृष्ण ठेके पर रुक न जाएँ।

अलावा इसके कितनी सारी छोटी-छोटी चीज़ें थीं जिन्हें सजीचेची ने मुझे सिखाया – जैसे, उँगली पर ज़रा भी लगे बगैर नाखून पर नेलपॉलिश लगाना। और पानी के अन्दर साँस रोकना। वो कहती थी कि इसका एक तरीका होता है। अगर कुछ गड़बड़ हुई तो कॉर्क की तरह ऊपर तैरने लगेगी। अभी मैं सोलह तक ही गिन पाती थी और मेरे फेफड़े हवा के लिए चिल्लाने लगते थे। मेरी गिनती सोलह के आगे अब कभी नहीं बढ़ेगी।

ओह! कितनी कमी खलती थी मुझे उसकी! कितनी याद आती थी!

बच्चों की टोलियाँ नीचे नायाड़िपारा जा रही थीं। इनमें मेरी क्लास के भी कुछ बच्चे थे। आज उन्हें घर जाने की कोई जल्दी नहीं थी। उन पर ध्यान दिए बगैर मैं दौड़ पड़ी। मेरा घर धूप में चुपचाप तप रहा था। गुड़हल के फूल प्यासे लग रहे थे – शाम को पानी देना ही पड़ेगा उन्हें।

रसोई में अँधेरा था। शायद अम्मा ने आज कुछ नहीं बनाया था। मैं अन्दर गई। वहाँ लटके केले के गुच्छे से दो केले खा लिए। और फिर ऊपर चली गई। अम्मा अपने बिस्तर पर लेटी थीं। वो थकी हुई और उदास लग रही थीं – अब ऐसा रोज़ होता था। मैं उनके बिस्तर पर चढ़कर बैठ गई। वो हिलीं और मुझे बाँहों में भर लिया।

"कैसा था स्कूल?" उन्होंने पूछा।

"ठीक था। कल से छुट्टियाँ।"

"क्यों?"

"अम्मा, गर्मियों की छुट्टियाँ हैं। इम्तिहान खत्म हो गए हैं। अब जून तक स्कूल नहीं जाना है।"

अम्मा को जैसे कुछ सूझ नहीं रहा था। "गर्मियों की छुट्टियाँ लग गईं क्या? तो तुम सारा दिन अब घर में ही रहोगी।" उन्होंने अपनी बाँहें हटाईं और अपनी आँखें मलने लगीं। "अब मैं तुम्हारे साथ करूँगी क्या?"

वो परेशान-सी, अनमनी-सी लग रही थीं। मैं उनके चेहरे पर खीज देख पा रही थी। "तुम ज़्यादा सोचो मत, अम्मा," मैं उनसे सटकर बैठ गई, "मैंने रशीदा के साथ ढेर सारे प्लान बना लिए हैं। मेरी फिक्र मत करो।" सजीचेची के बाद मेरी सबसे अच्छी दोस्त रशीदा ही थी।

अम्मा मेरी बात सुन रही थीं सो अपनी बात कहने का मौका मैंने हाथ से जाने न दिया, "अम्मा, तुम उठकर नहा क्यों नहीं लेतीं? मैं तुम्हारे लिए पानी गरम कर देती हूँ। फिर अपन दोनों गुड़हल को पानी देंगे।"

पर वो तो पहले ही लेट गई थीं। "उठती हूँ। बस एक मिनट में," वो बोलीं। "बस, थोड़ी देर आराम कर लूँ। तब तक तुम क्यों नहीं पेड़ों को पानी दे आतीं? फिर मैं उठ जाऊँगी।"

मुझे समझ आ गया कि आज तो वो नहीं उठेंगी। उनके कुछ दिन अच्छे होते थे, कुछ बुरे। आज बुरे दिन की बारी थी। डॉक्टर प्रभाकरन इसे डिप्रेशन कहते थे। मैं उनसे सटकर लेट गई। वो पूरी तरह खुमारी में थीं। पहले जब वो काम के बाद घर लौटती थीं तो सब कुछ कितना अलग होता था। सजीचेची, अम्मा और मैं बगीचे में घूमा करते

थे। कभी-कभी अच्चन भी साथ हो लेते। वो गुड़हल के फूल अपने कान के ऊपर लटकाकर कूल्हे मटकाते हुए "हवा हवाई" पर नाचने लगते थे। सजीचेची और मैं उनके आसपास उछलते रहते। अम्मा ज़ोर-ज़ोर से हँसती थीं। फिर झूठमूठ का गुस्सा दिखातीं। फिर वो हम दोनों की कँघी करतीं और चोटियाँ बाँध देतीं। हम दोनों अपना स्कूल का काम करते और इसके बाद रात का खाना होता। खाने के बाद सब साथ-साथ एशिया नेट पर "स्त्री" सीरियल देखते।

इन दिनों अच्चन घर में कम ही दिखाई देते थे। वो देर रात गए आते थे। कभी-कभी जब वो मुझे देखने मेरे पास आते तो मैं जाग जाती। मैंने सोच लिया था कि आज उनके आने तक मैं जागी रहूँगी। मैं उठी और बाहर पौधों को पानी पिलाने चली गई।

III

मैंने "स्त्री" नहीं देखा – अकेले टीवी देखना कितना बोरिंग लगता था। और इस सीरियल में होता भी क्या था – बस रोना रोना रोना। बजाय इसके मैंने सोचा कि मैं कुछ लिखती हूँ। मैं बड़े होकर लेखक बनना चाहती थी। अच्चन कहते थे कि लेखक बनने के लिए आपका लगातार लिखते रहना ज़रूरी है। अब तक मैंने दो कहानियाँ लिखी थीं। एक थी – "मेरा गाँव-मेलेकरा" और दूसरी "फाख्ता और बन्दर"। यह कहानी एक बोलती फाख्ता और एक सैनिक बन्दर की थी जो पूरी दुनिया साथ-साथ घूमने जाते हैं। अच्चन इसे "यात्रा वृतान्त" कहते थे। और कहते थे कि एक दस साल के बच्चे के लिए ऐसा लिख पाना तो "एक बड़ी उपलब्धि" है।

मैं फर्श पर लेटी-लेटी सोचने लगी कि अब क्या "उपलब्धि जैसी" चीज़ लिखी जाए। तभी पीछे वाले दरवाज़े से कोई आवाज़ आई। मैं जानती थी वहाँ कौन होगा। मैं रेंगती-सी रसोई में पहुँची और खिड़की से झाँककर देखा। वहाँ छोटे-से बल्ब की मद्धम रोशनी में चाकुप्रान्दन खड़ा नज़र आया। मैं जानती थी कि वो भूखा होगा और कुछ खाने की तलाश में आया होगा। अम्मा हमेशा उसे कुछ काँजी दे देती थीं। मुझे उससे

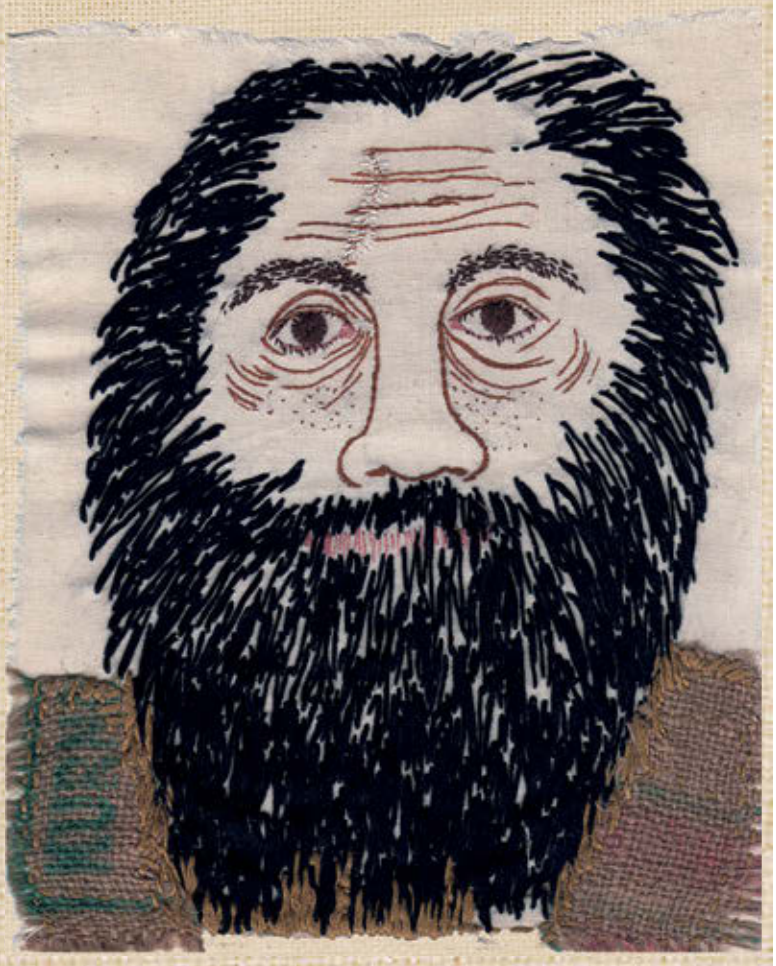

थोड़ा डर लगता था और आज काँजी थी भी नहीं। मैं चुपचाप रहूँ तो क्या पता वो चला ही जाए।

चाकुप्रान्दन कुछ अजीब-सा था। वो फटी-पुरानी बोरियों के थेगड़ों को जैसे-तैसे सिलकर पहनता था। इसीलिए लोग उसे "चाकुप्रान्दन" पुकारते। एक दिन रशीदा की दादी खादीजुम्मा ने बताया कि जब वो मेलेकरा में पहली बार नज़र आया तो वह बहुत बढ़िया कपड़े पहनता था और बहुत स्मार्ट दिखता था। कोई नहीं जानता वो कहाँ से आया। एक दिन वो आया और फिर कभी नहीं गया।

चाकुप्रान्दन हमारे घर के सामने वाली गली में सोता था। पोस्ट ऑफिस के पास वाली दुकान के बरामदे पर। मुझे उसे देखते रहना अच्छा लगता। पर सजीचेची कहती थी कि लोगों को इस तरह घूरते रहना कोई अच्छी बात नहीं। पोस्ट मास्टरनी अम्मिणीअम्मा उस पर हमेशा चिल्लाती रहती क्योंकि वो बरामदे में मूतता था। पर उन्होंने उसे वहाँ से भगाने की कोशिश नहीं की। सुबह जब वो पोस्ट ऑफिस खोलतीं, चाकुप्रान्दन

चुपचाप उठकर चल देता। मुझे वो कभी बरगद के पेड़ के नीचे बैठा और कभी इंग्लिश स्कूल के बाहर हम बच्चों को खेलता देखता नज़र आता। कुछ बच्चे कभी-कभी उसका मज़ाक बनाते। पर ज़्यादातर लोग उसे उसके हाल पर छोड़ देते।

सिवाए उस बार के जब सजीचेची और मैंने उसे मुरली मैनन से पिटते देखा। मुरली मैनन की सब्ज़ी की दुकान थी। उस शनिवार हम अच्चन के साथ बाज़ार गए थे। चाकुप्रान्दन बाज़ार में इधर-उधर घूम रहा था। वो बहुत उत्साहित लग रहा था क्योंकि वहाँ जहाँ-तहाँ बोरियाँ पड़ी थीं। चलते-चलते उसने मुरली मैनन की दुकान के सामने खाली पड़ी एक बोरी उठा ली। मैनन अपनी दुकान से दौड़ता आया और उसे गालियाँ देने लगा। उसने उसके हाथ से बोरी छीनने की कोशिश की। पर चाकुप्रान्दन का बोरी वापस करने का कोई इरादा नहीं था। फिर क्या, मैनन उसे मारने-पीटने लगा। सारे लोग उसे बचाने के लिए मैनन पर चीखने-चिल्लाने लगे।

सजीचेची बोली, "अगली बार जब भी मैनन हमारे गालों पर चुटकी भरते हुए हमें मिठाई देगा, हम उसे जीभ दिखाकर भाग जाएँगे।"

मुझे समझ नहीं आता था कि वो यहाँ मेलेकरा में आया ही क्यों। उसका परिवार कहाँ था? क्या कोई उसका इन्तज़ार करता होगा? कई ऐसे दिन भी होते जब अच्चन 10 बजे तक भी घर नहीं आते थे। मैं परेशान हो जाती और सोचने लगती कि अगर वो कभी घर लौटे ही नहीं तो क्या होगा। शायद मुझे चाकुप्रान्दन के परिवार पर एक कहानी लिखनी चाहिए। पर जब सोचने बैठी तो मुझे कुछ भी नहीं सूझा।

मैंने रसोई की खिड़की से फिर से झाँका। वो चला गया था। हो सकता है वो हमारी पड़ोसन माधवीअम्मा के घर गया हो। मैंने सोच लिया था कि अगर वो कल भी आता है तो मैं हिम्मत करके उसे खाना दे दूँगी।

जारी... चकमक

तुम भी बनाओ

कबूतर

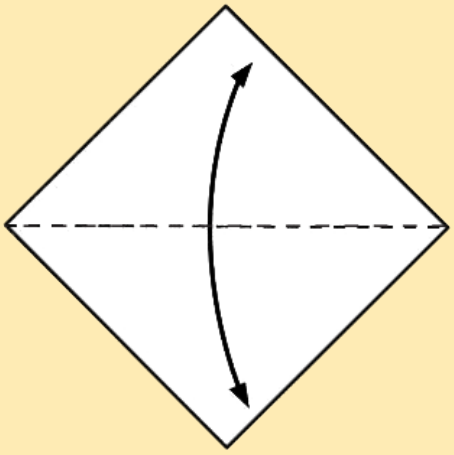

1.

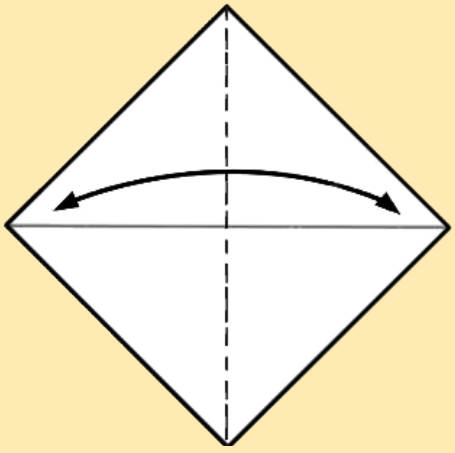

2.

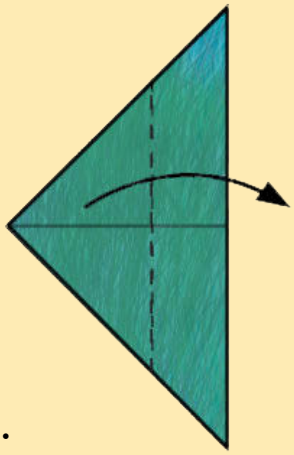

3.

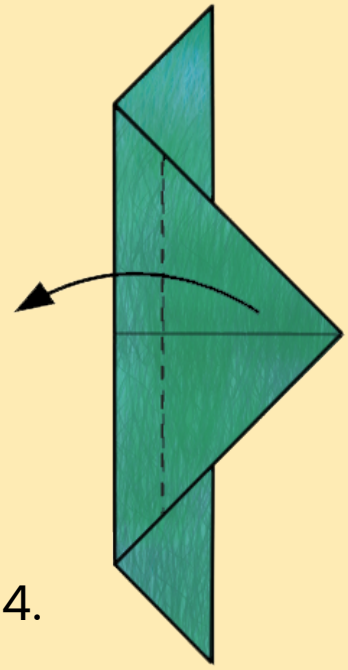

4.

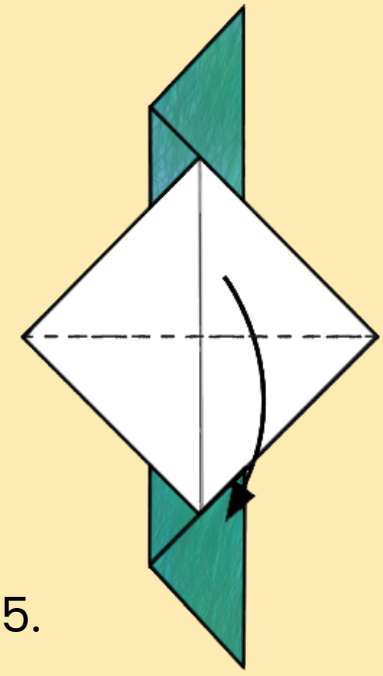

5.

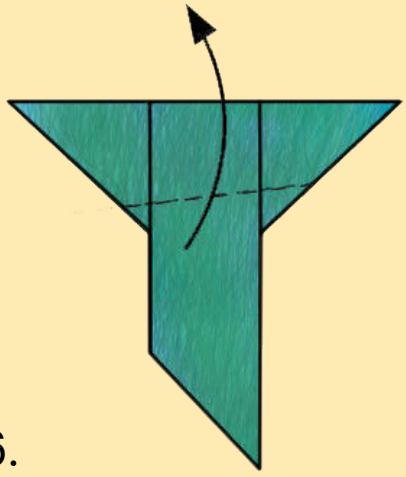

6.

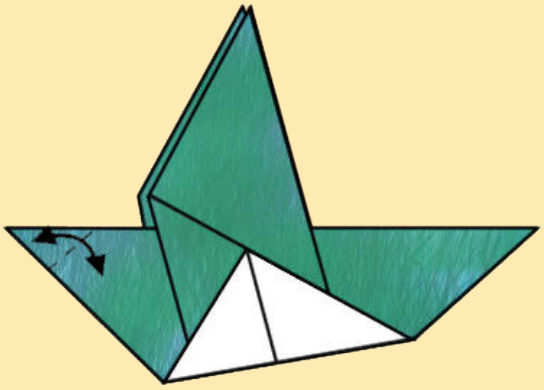

7.

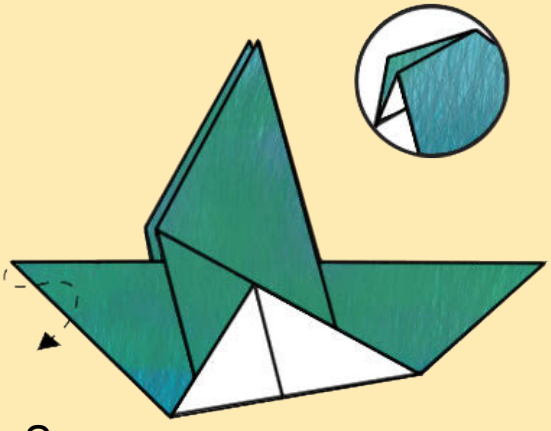

8.

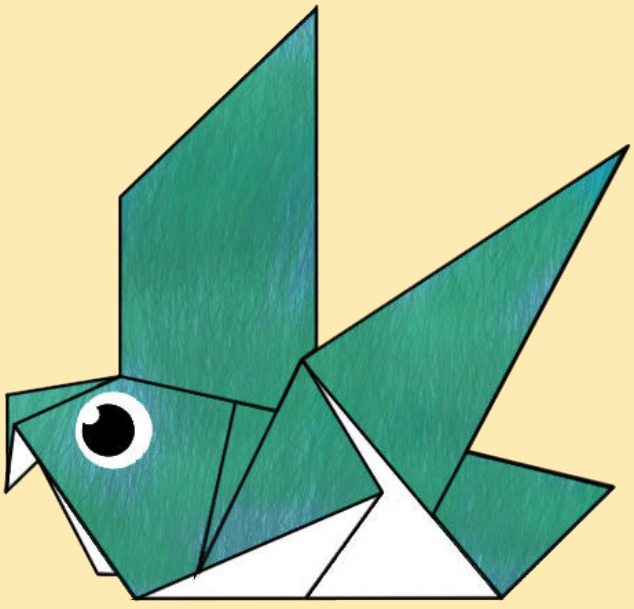

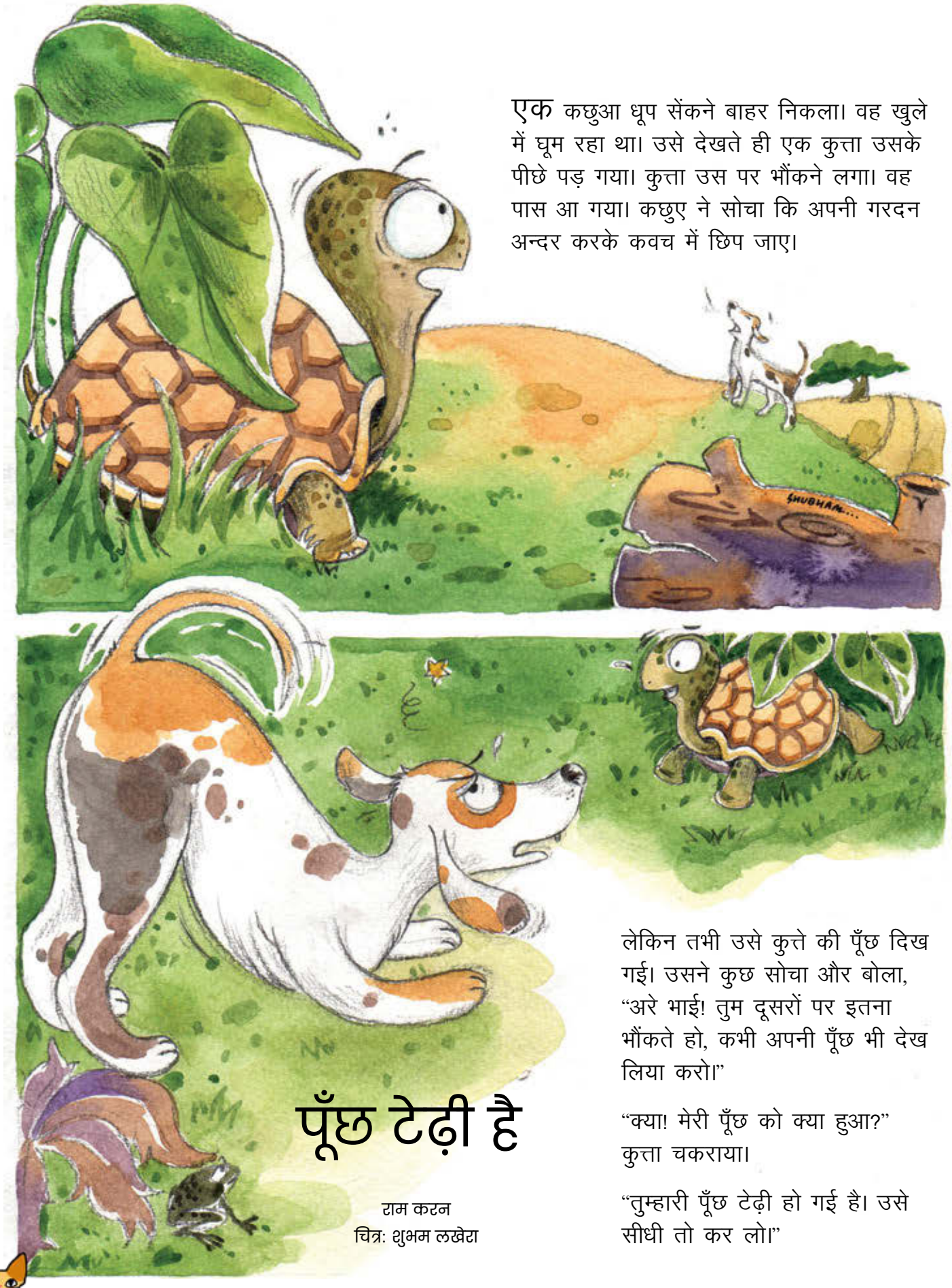

पूँछ टेढ़ी है

राम करन
चित्र: शुभम लखेरा

एक कछुआ धूप सेंकने बाहर निकला। वह खुले में घूम रहा था। उसे देखते ही एक कुत्ता उसके पीछे पड़ गया। कुत्ता उस पर भौंकने लगा। वह पास आ गया। कछुए ने सोचा कि अपनी गरदन अन्दर करके कवच में छिप जाए।

लेकिन तभी उसे कुत्ते की पूँछ दिख गई। उसने कुछ सोचा और बोला, “अरे भाई! तुम दूसरों पर इतना भौंकते हो, कभी अपनी पूँछ भी देख लिया करो।”

“क्या! मेरी पूँछ को क्या हुआ?” कुत्ता चकराया।

“तुम्हारी पूँछ टेढ़ी हो गई है। उसे सीधी तो कर लो।”

“उम्म...” कुत्ते ने अपनी गरदन मोड़ी। फिर उसने पूँछ को मुँह से पकड़ने की कोशिश की।

पूँछ उसके मुँह में आ गई। उसने पूँछ को खींचा और छोड़ दिया। लेकिन पूँछ वापिस टेढ़ी हो गई।

उसने दुबारा उसे पकड़ा और छोड़ा। बार-बार वह पूँछ को पकड़ता और छोड़ देता। पर पूँछ टेढ़ी ही रहती।

तभी उसे कछुए का खयाल आया। उसने घूमकर देखा। कछुआ कहीं नज़र नहीं आया। वह दौड़ा। लेकिन कछुआ तो पहले ही नौ दो ग्यारह हो गया था।

चित्र: आयुष पाण्डेय, परिवर्तन सेंटर, सिवान, जीरादेई, बिहार

बोर हो गया हूँ

दिविज अग्रवाल
दूसरी, एमिटी इंटरनेशनल स्कूल, गाज़ियाबाद, उत्तर प्रदेश

लॉकडाउन में मैं घर पर रहता हूँ। घर पर रहकर मैं बोर हो गया हूँ। बाहर नहीं जा सकता। पार्क में नहीं खेल सकता। दोस्त भी नहीं आ पाते क्योंकि बाहर कोरोना है।

पापा भी घर से ही ऑफिस का काम कर रहे हैं। लॉकडाउन में मम्मी की मदद से मैंने पाम आर्ट बनाना सीखा। पापा ने प्रिन्टर चलाना सिखाया। मेरी क्लास भी ऐप पर हो रही है। मम्मी से मैंने आलू-मटर छीलना सीखा। अपनी प्लेट और कटोरी अब मैं खुद धोता हूँ। मैंने खूब चित्र बनाए हैं। कभी-कभी डाँट भी पड़ जाती है। ये लॉकडाउन पता नहीं कब हटेगा। मैं अपने दोस्तों और झूलों से मिलना चाहता हूँ।

ये कोरोना वायरस कब खतम होगा

तपस्या
छठवीं, दीपालया लर्निंग सेंटर, संजय कॉलोनी, दिल्ली

मैं घर पर ही टीवी देखकर और खेलकर समय बिताती हूँ। मैं सोचती हूँ कि पता नहीं ये कोरोना वायरस कब खतम होगा और कब मैं बाहर जाऊँगी। यह भी सोचती हूँ कि जो लोग इससे बीमार हुए हैं वो जल्दी ठीक हो जाएँ।

मेरा पन्ना

चित्र: गुंजन मारुडा, छठवीं, प्रगत शिक्षण संस्थान, फलटण, सतारा, महाराष्ट्र

बहुत सारी नई-नई चीज़ें सीखीं

श्रीनिशा माण्डरे
नौवीं, प्रगत शिक्षण संस्थान, फलटण, सतारा, महाराष्ट्र

जब लॉकडाउन शुरू हुआ तो मैं बहुत थक गई थी। मैं अपनी माँ को बहुत परेशान करती थी। माँ ने कहा कि मुझे परेशान मत करो। यही समय है कि तुम जो चाहे कर सकती हो। मैंने घर में रहकर बहुत सारी नई-नई चीज़ें सीखीं। जैसे खाना बनाना, कचरे से टिकाऊ सामान बनाना। मैंने मण्डला आर्ट भी सीखा। वैसे मुझे खाना बनाना बिलकुल पसन्द नहीं पर मैंने इस खाली समय में नई-नई रेसिपी सीखीं। इससे मेरी खाना पकाने में कुछ-कुछ रुचि जगी। इस समय में मैं बहुत सारे पुराने खेल भी सीख गई। समय कैसे गुज़र रहा है। मुझे समझ ही नहीं आ रहा। हम रोज़ सुबह समाचार सुनते हैं और आसपास क्या हो रहा है इसके बारे में बात करते हैं।

कोरोना का संकट

विवेक देवांगन
अज़ीम प्रेमजी स्कूल, धमतरी, छत्तीसगढ़

पहले मैं यही सोचता रहता था कि कोरोना नाम का यह संकट दुनिया से कब जाएगा। कोरोना के मरीजों की बढ़ती संख्या के बारे में सुनता तो लगता कि जैसे अब इस दुनिया से मानव का अन्त निश्चित है। जब मैंने ऐसा सोचा तो मैं डर गया। मेरे मन में खयाल आया कि अगर यह बीमारी मच्छरों में पहुँच गई तो संक्रमण और अधिक बढ़ जाएगा। फिर मैंने कोरोना से अपना दिमाग हटाकर कुछ रोचक कहानी, किताबें पढ़ीं। कहानियों से मन कुछ देर ठीक रहता लेकिन मैं फिर कोरोना के संकट के बारे में सोचने लगता। फिर मैंने इसका तोड़ निकाल ही लिया। मैंने उपन्यास पढ़ना शुरू किया। इससे मुझे अच्छा लगा और मेरा वक्त भी कटता गया।

कोरोना के दौर में...

रितिका गौर
बारहवीं, केन्द्रीय विद्यालय क्रं 2, भोपाल, मध्य प्रदेश

मैं और मेरी उम्र के कई बच्चे अभी अपने घरों में बन्द हैं। मेरी बारहवीं कक्षा की परीक्षाएँ चल रही थीं। अभी तक हमारी परीक्षा खतम हो जानी थी, लेकिन इस बीमारी के चलते उसे आगे बढ़ा दिया गया है। हालाँकि हम सभी को घर में रहने का ऐसा मौका पहली बार नहीं मिला। अकसर अपनी गर्मियों की छुट्टी के दौरान भी हम घर पर ही होते हैं। बस फर्क इतना है कि उस समय कोई बन्दिशें नहीं होतीं घर से बाहर जाने को लेकर और अभी हैं।

मुझे लगता है कि बच्चों के लिए यह समय उतना कठिन या गम्भीर नहीं है जितना बड़ों के लिए है। मैं तो अपने मम्मी-पापा की बात मानकर घर पर बैठी हूँ। इसके चलते मेरे सोने का समय भी बदल गया है। अब मैं रात के 2-3 बजे तक जागती रहती हूँ और सुबह भी देर से उठती हूँ। इस दौर में सोशल मीडिया मेरा बहुत साथ दे रहा है। अपने दोस्तों से जुड़े रहने का यही एक सबसे आसान रास्ता है मेरे पास। मैं इंस्टाग्राम, फेसबुक, व्हॉट्सऐप जैसे अन्य ऐप्स का इस्तेमाल करते-करते अपना पूरा दिन निकाल देती हूँ। सोशल मीडिया और इंटरनेट की वजह से छोटी से छोटी जानकारी और अपडेट्स मुझे मिल जाती हैं।

इस लॉकडाउन के चलते आजकल बहुत लोगों की कुकिंग में दिलचस्पी नज़र आ रही है। अभी कुछ समय पहले ही मेरे दोस्त

चित्र: धनंजय कुमार, बाल भवन किलकारी, पटना, बिहार

अलग-अलग व्यंजन बनाने की कोशिश कर रहे थे और अपनी फोटो साझा कर रहे थे। इस दौरान अलग-अलग ट्रेंड्स भी शुरू हुए, जैसे कि डालगोना कॉफी बनाना, इंस्टाग्राम चैलेंजेस इत्यादि।

फिल्में, गाने आदि सभी मेरे लिए ज़रूरी बन गए हैं। अपना समय काटने के लिए मैं दिन भर में कई फिल्में देख लेती हूँ और गाने सुनती रहती हूँ। समय कठिन है। किसी को भी इतने अधिक समय तक घर में रहने की आदत नहीं है। कई बार कुछ बातों पर बड़ों के साथ सहमत नहीं होती तो बहस भी हो जाती है। परीक्षा की फिक्र मुझे अभी भी है। मैं कोशिश कर रही हूँ शान्त रहने की और बाहर न निकलने की। आने वाला समय कैसा होगा, पता नहीं, लेकिन उम्मीद है कि उसके लिए भी हम खुद को तैयार कर लेंगे।

चित्र: आदित्य बंग, पहली, आनन्द निकेतन स्कूल, सेवाग्राम, वर्धा, महाराष्ट्र

चित्र: आराध्या श्रीवास्तव, पाँचवीं, लखनऊ पब्लिक कॉलेज, लखनऊ, उत्तर प्रदेश

बहुत बुरा हाल हुआ

देवेन्द्र धवडे
दूसरी, प्रगत शिक्षण संस्थान, फलटण, सतारा, महाराष्ट्र

कोरोना जब भारत में आया तो पूरे भारत में लॉकडाउन कर दिया गया। इससे कुछ लोगों का बहुत बुरा हाल हुआ। जैसे गरीबों को खाना नहीं मिल रहा है। कुछ लोग काम के लिए यहाँ आए थे तो उनके पास अब काम नहीं है। इसलिए वे लोग पैदल ही अपने गाँव जा रहे हैं। इसलिए सरकार इन लोगों को खाना दे रही है। लॉकडाउन किया है फिर भी कुछ लोग बाहर निकल रहे हैं। लॉकडाउन में लोग बाहर निकलते हैं तो पुलिस उनको पीट भी रही है। लॉकडाउन है इसलिए पाठशाला, कॉलेज, दुकान सब बन्द है। कोरोना को हराना है तो हमें घर पर ही रहना चाहिए।

पुराने समय जैसे रह रहे हैं

पावनी चौधरी
छठवीं 'सी', द हेरिटेज स्कूल, वसन्त कुंज, नई दिल्ली

स्कूल खुलने ही वाले थे कि छुट्टियाँ आगे बढ़ गईं। लॉकडाउन में हम सब घर में ही रहते हैं लेकिन मेरे पापा की ऐसी नौकरी है कि उन्हें बाहर जाना पड़ता है। मेरी मम्मी पूरे दिन घर पर होती हैं। हम अच्छे-अच्छे पकवान बनाते हैं। कहानियाँ भी पढ़ते हैं और मज़े करते हैं।

सुबह मेरी ऑनलाइन क्लासेस होती हैं बिलकुल स्कूल की तरह। लेकिन अगर मैं स्कूल जाती और अपने दोस्तों से मिल पाती तो बहुत अच्छा होता।

कभी-कभी मैं बोर हो जाती हूँ। पर बाहर तो जा नहीं सकती। ऐसा लगता है कि हम लोग पुराने समय जैसे रह रहे हैं।

1. इन फूलों का रस चूसने एक मधुमक्खी भी आई हुई है। तुम्हें दिखी क्या?

2. 8+8+8 = 24। क्या तुम किसी और संख्या को तीन बार इस्तेमाल करके 24 ला सकते हो?

3. 5x5+5 = 30। क्या तुम किसी और संख्या को तीन बार इस्तेमाल करके 30 ला सकते हो?

माथा पच्ची

4. एक कम्पनी में हर हफ्ते अलग-अलग लोगों की मौत हो रही थी। पहले हफ्ते जैकब की मौत हुई, दूसरे हफ्ते फारुक, तीसरे हफ्ते मरियम, चौथे हफ्ते अनघा, पाँचवें हफ्ते मनु और आज जूली की मौत हुई है।

पुलिस खूनी का पता तो लगा ही रही थी। साथ ही यह भी पता लगाने की कोशिश कर रही थी कि अगला खून किसका होगा ताकि उसे बचाया जा सके। ऑफिस में चार ही लोग बचे हैं : राघव, जूही, रागिनी और अंशी। क्या तुम बता सकते हो खूनी का अगला निशाना कौन होगा?

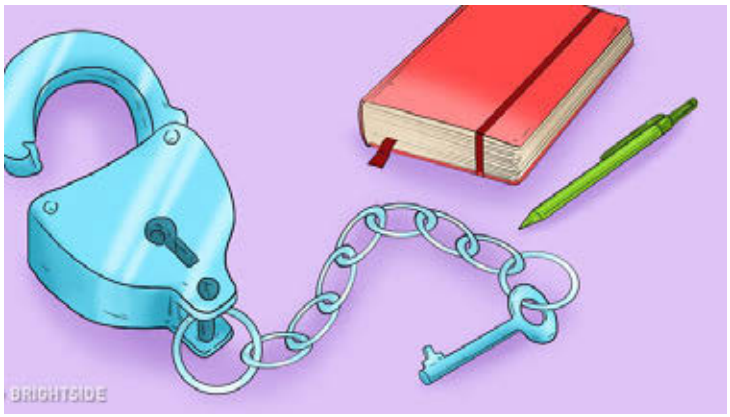

5. क्या तुम्हें इस चित्र में कुछ गड़बड़ लग रही है?

6.

केवल दो तीलियों को इधर-उधर करके इस संख्या से कौन-सी सबसे बड़ी संख्या बना सकते हैं?

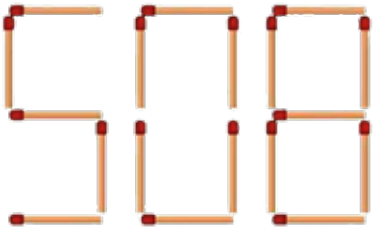

7. तस्वीर के इन टुकड़ों को सही क्रम में जमाओ।

चित्र: हबीब अली

फटाफट बताओ

ऐसी कौन-सी भाषा है जिसे हम खा भी सकते हैं?

(अरबी, चीनी)

रोज़-रोज़ बादाम खाने से क्या होता है?

(बादाम खत्म हो जाएँगे)

ऐसा क्या है जिसे साल में केवल एक बार खरीदते हैं पर इस्तेमाल पूरा साल करते हैं?

(कैलेंडर)

20 सन्तरों को 11 बच्चों में बराबर-बराबर कैसे बाँटोगे?

(जूस बनाकर)

क्या है जो खाने के बाद तुरन्त मर जाती है?

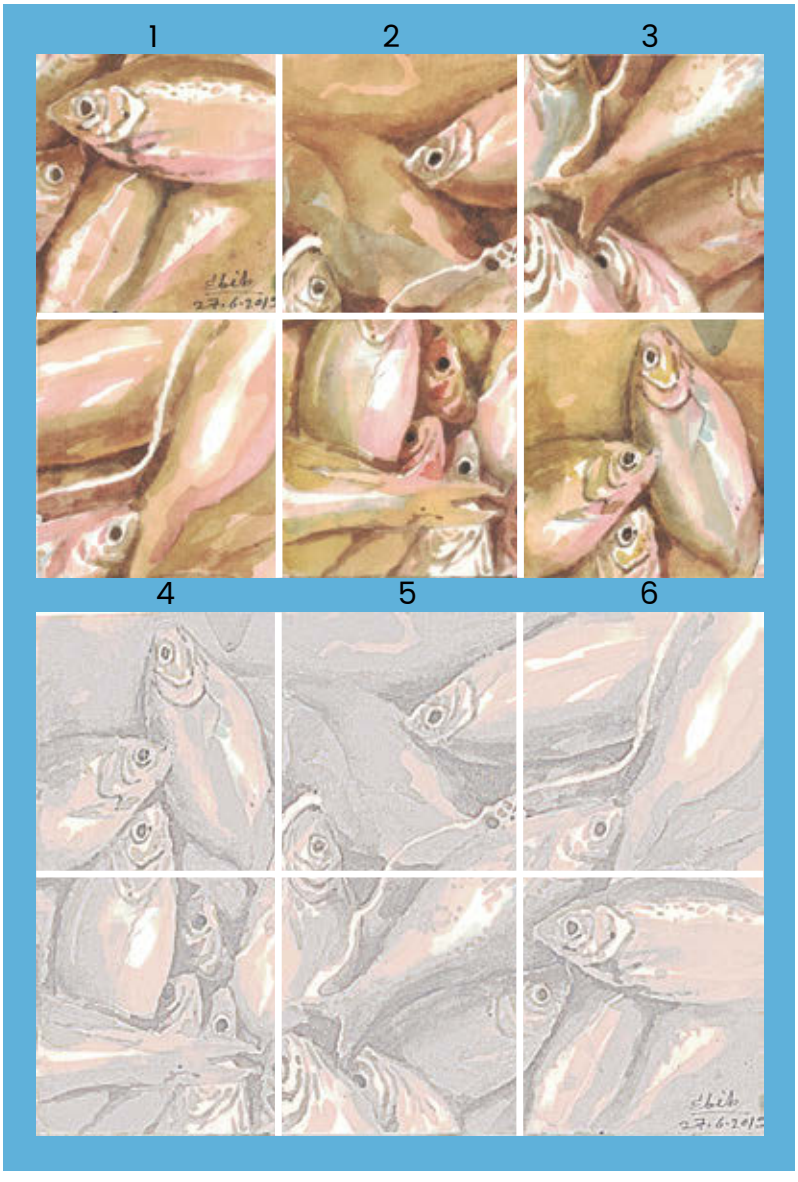

(भूख)

		3	6				8	
	2	1	7	8		3		
	7			3	1		9	4
4		2			8			5
6					3			1
1	3		4					9
				1	5			3
3	6	5	8	4	7	9		2
		4			9	5	7	

सुडोकू-30

दिए हुए बॉक्स में 1 से 9 तक के अंक भरने हैं। आसान लग रहा है न? पर ये अंक ऐसे ही नहीं भरने हैं। अंक भरते समय तुम्हें यह ध्यान रखना है कि 1 से 9 तक के अंक एक ही पंक्ति और स्तम्भ में दोहराए न जाएँ। साथ ही साथ, बॉक्स में तुमको नौ पीली लाइन वाले डब्बे दिख रहे होंगे। ध्यान रहे कि उन डब्बों में भी 1 से 9 तक के अंक दुबारा न आएँ। कठिन भी नहीं है, करके तो देखो। जवाब तुमको अगले अंक में मिल जाएगा।

चित्र पहेली

बाएँ से दाएँ

ऊपर से नीचे

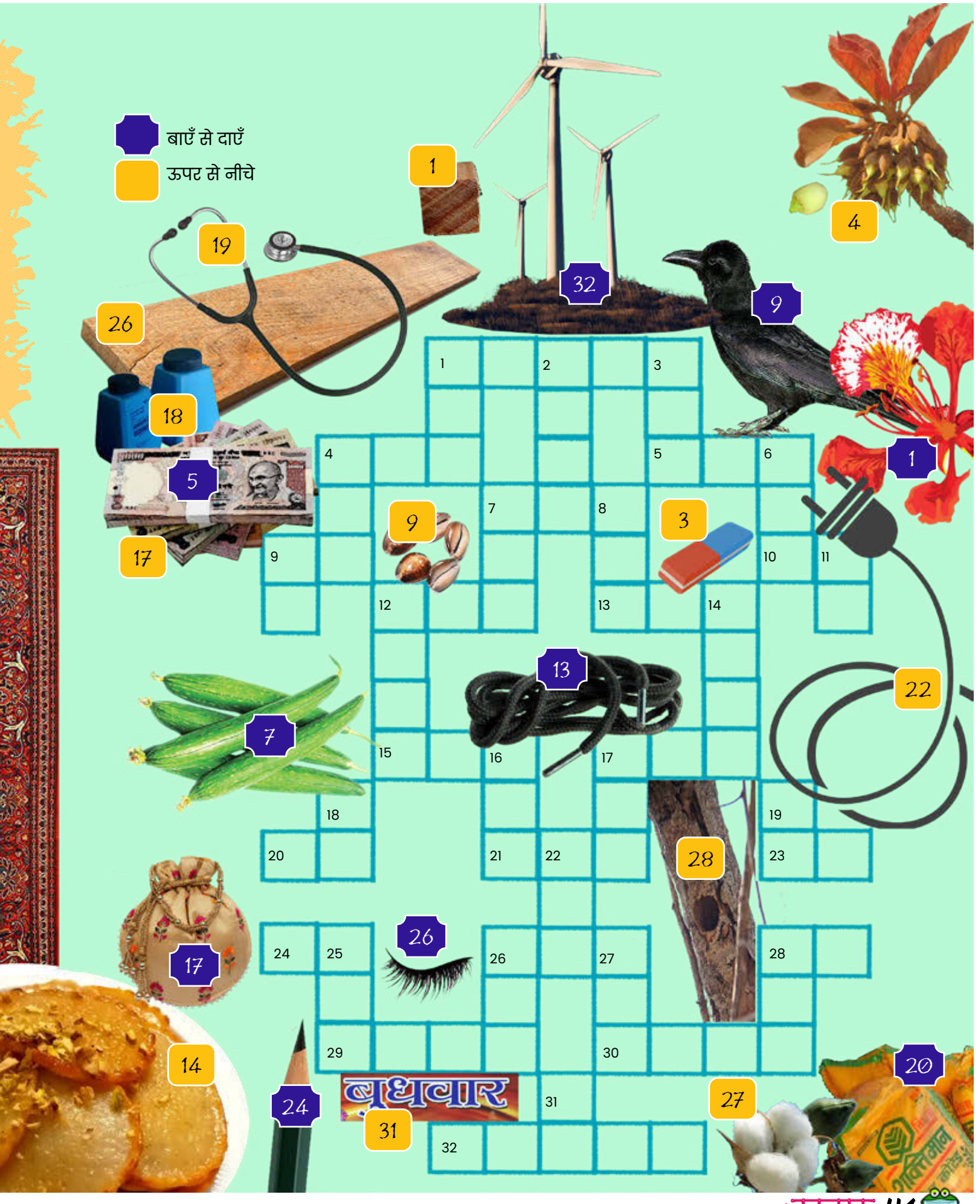

माथापच्ची

जवाब

1.

2. इसके कई हल हैं। दो जवाब इस तरह हैं: 22+2=24, 3^3-3=24

3. इसके भी कई जवाब हैं। कुछ हम यहाँ दे रहे हैं: 6x6-6=30 3^3+3=30, 33-3=30

4. खूनी महीनों के नाम के हिसाब से लोगों को मार रहा है। अभी तक जो भी लोग मरे उनके नाम के पहले अक्षर पर गौर करो।
पहले हफ्ते - जैकब - जनवरी
दूसरे हफ्ते - फारुक - फरवरी
तीसरे हफ्ते - मरियम - मार्च
चौथे हफ्ते - अनघा - अप्रैल
पाँचवे हफ्ते - मनु - मई
आज - जूली - जून
अगला महीना जुलाई का है यानी कि अगला खून होगा जूही का।

5. चाबी ताले के साथ ही जुड़ी हुई है।

6.

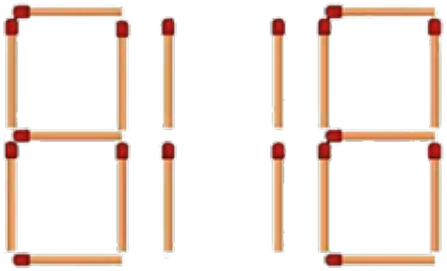

7.

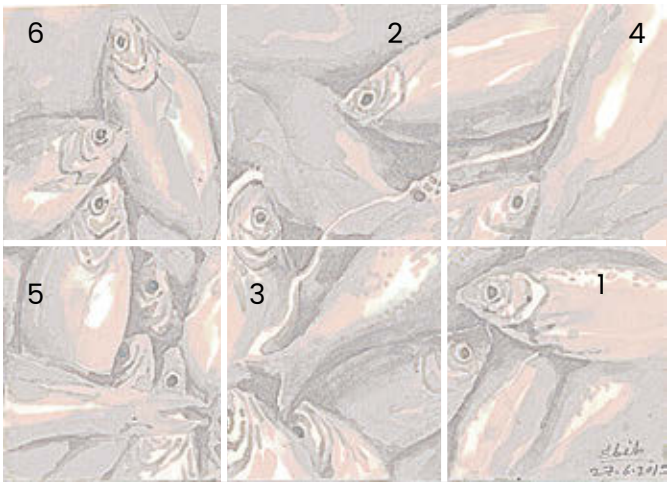

अप्रैल की चित्रपहेली का जवाब

भूलभुलैया जवाब

सुडोकू-29 का जवाब

2	9	3	7	1	6	8	5	4
8	7	5	4	2	3	1	6	9
4	6	1	8	5	9	3	2	7
9	4	8	3	7	2	5	1	6
6	1	2	5	9	4	7	8	3
5	3	7	6	8	1	4	9	2
7	5	4	9	6	8	2	3	1
3	2	6	1	4	5	9	7	8
1	8	9	2	3	7	6	4	5

अन्तर ढूँढो

फोटो: लोकेश मालती प्रकाश

RNI क्र. 50309/85 डाक पंजीयन क्र. म. प्र./भोपाल/261/2018-20

कोरोना वायरस और चमगादड़

रोहन चक्रवर्ती

प्रकाशक एवं मुद्रक अरविन्द सरदाना द्वारा स्वामी रैक्स डी रोज़ारियो के लिए एकलव्य, ई-10, शंकर नगर, 61/2 बस स्टॉप के पास, भोपाल 462016, म प्र से प्रकाशित एवं आर के सिक्युप्रिन्ट प्रा लि प्लॉट नम्बर 15-बी, गोविन्दपुरा इण्डस्ट्रियल एरिया, गोविन्दपुरा, भोपाल - 462021 (फोन: 0755 - 2687589) से मुद्रित।
सम्पादक: विनता विश्वनाथन